THE CORE IAS

INTERNATIONAL RELATIONS
(अंतर्राष्ट्रीय सम्बन्ध)

MAINS ANSWER WRITING CLASSES

UPSC 2018 MAINS

प्रारंभिक परीक्षा 2018 सम्पन्न हो चूकी है ,आप सभी का ध्यान अब मुख्य परीक्षा पर केन्द्रित होगा |आप के मुख्य परीक्षा में समाचार पत्रों में आने वाले सम्पादकीय अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है |पर कई बार समस्या यह उत्पन्न होती है की अलग अलग अखबारों से इन सम्पादकीय खंड को कैसे पढ़ा जाये और उनका किस स्तर पर संकलन किया जाये |मुख्य परीक्षा में अलग अलग पेपर में हमे अलग अलग विचार को प्रश्नगत दर्शाना होता है ,जिसकी विस्तृत विवेचना हम **"उत्तर लेखन "** की कक्षा में करते है |आप सभी के लिए यह कतई संभव नहीं है की इन सभी सम्पादकीय को अलग अलग समाचार पत्रों से दिन प्रतिदिन पढ़ा जाये और उसका संकलन किया जा सके | हमने इन बातो को समझा और **THE CORE IAS** टीम द्वारा पुरे एक वर्ष के उन सम्पादकीय का संकलन किया गया है जो परीक्षा में आपके विचारो और ज्ञान को पुष्टता प्रदान करे| |हमने इस सम्पादकीय श्रृंखला को मुख्य परीक्षा के **प्रश्न पत्र 1,2,3और 4** के अनुरूप संकलित किया है ताकि अध्यनरत अभ्यर्थियो जिन्हें मुख्य परीक्षा लिखनी है उनका समय और उर्जा दोनों को बचाया जा सके |

देश के प्रतिष्ठित दैनिक समाचार पत्रों के अलावा साप्ताहिक /पाक्षिक पत्रिका ,विभिन्न वेबसाइट /वेब पोर्टलो से हमने इन सम्पादकीय को संकलित किया है |पहली श्रृंखला में हम प्रश्न पत्र 1 के पाठ्यक्रम के अनुसार,दूसरी श्रृंखला में प्रश्न पत्र 2 के अनुसार सम्पादकीय को प्रस्तुत किया था जिनमे हमने कुछ प्रश्न भी शामिल किये है| यह तीसरी श्रृंखला **अंतर्राष्ट्रीय सम्बन्ध** को समर्पित है|

हमारे कक्षा प्रोग्राम में सम्पादकीय आधारित उत्तर लेखन किया जाता है |बहुत जल्द ही हम इसका मॉडल उत्तर अपने वेबसाइट WWW.GSHINDI.COM// WWW.THECOREIAS.COM

के अतिरिक्त हमारे YOUTUBE CHANNEL THECOREIAS पर भी देख सकते है |विगत वर्षो से संघ लोक सेवा आयोग के प्रश्नों में काफी व्यापकता आयी है ,जो की सम्पादकीय की प्रासंगिकता को संदर्भित करती है |

2018 मुख्य परीक्षा के लिए उत्तर लेखन की कक्षा 18 जून से प्रारंभ हो चुकी है ,यह फ़ास्ट ट्रैक बैच है जो 500+ प्रश्न और लगभग 100 टॉपिक्स को पूर्ण कराया जायेगा |

हमने साप्ताहिक निबंध की खुली प्रतियोगिता का आयोजन अपने वेबसाइट के माध्यम से किया है| जिसमे उम्र और शैक्षणिक योग्यता की कोई बाध्यता नहीं है |अधिक जानकारी के लिए WWW.GSHINDI.COM//WWW.THECOREIAS.COM पर विजिट कर सकते है या फिर हमे WHATSAPP/TELEGRAM +918800141518 पर सन्देश भेज सकते है|

Content

भारत-अफगानिस्तान सम्बन्ध-

1. अब सीपीईसी में अफगानिस्तान

भारत-इजराइल-फिलिस्तीन सम्बन्ध-

1. भारत के लिए अब इजरायल के साथ रक्षा क्षेत्र से इतर भी संबंध मजबूत करने की जरूरत है
2. दोस्ती का कारवां: भारत इजरायल
3. भारत-फिलीस्तीन संबंध-संतुलन
4. सहयोग संभावनाएं: भारत और इजरायल
5. भारत को महंगी भी पड़ सकती है इजरायल से दोस्ती, हो सकते हैं ये नुकसान

भारत-आसियान सम्बन्ध–

1. भारत-आसियान दोस्ती का नया दौर
2. चीन के मामले में हर तरफ से सतर्क
3. वर्तमान समय में भारत- चीन के बीच उपजी तनातनी के पीछे क्या कारण हैं? सीमा सम्बन्धी विवाद और भू- सामरिक दृष्टिकोण पर विचार व्यक्त कीजिये।
4. चीन का यह कदम हिंद महासागर में भारत की चिंता को बढ़ाने वाला है
5. चीन के आर्थिक हितों पर डोकलाम विवाद बेअसर
6. भारत और नेपाल
7. दुनिया की खामोशी से शर्मसार मानवता : Rohingya Issue

7.1 रोहिंग्या मुसलमानों पर भारत का यूएन को कड़ा जवाब, कहा – Question of National Security

- म्यांमार (myanmar) संकट से पार पाने की चुनौती

8. म्यांमार से मित्रता बढ़ाने का समय
9. ताकतवर जापान भारत के लिए होगा मददगार
10. जापान (India Japan Relation) के साथ रिश्तों की नई रफ्तार
11. अफगानिस्तान मुद्दे पर अमेरिका से अलग भारत को बनानी होगी रणनीति

भारत-युएसए सम्बन्ध-

1. अमेरिका की दक्षिण एशिया नीति में भारत का स्थान बेहद अहम : पेंटागन
2. भारत को देखने के अमेरिकी नज़रिये में बदलाव
3. डोनाल्ड ट्रंप की नई Afgan Policy
4. यूएस की नई अफगान पॉलिसी (Afgan Policy) से होगा एक नए युग का आरंभ
5. अमेरिका के लिए अहम बनता भारत

भारत-मालदीव सम्बन्ध-

1. मालदीव को लेकर भारत की नीति क्या होनी चाहिए? | India Maldive relation
2. मालदीव पर मौन से नहीं चलेगा काम (Silance not solution to maldive crisis)
3. मुक्तिदाता न बने भारत (India Maldive)

भारत-मध्य एशिया सम्बन्ध-

1. क्या OMAN से समझौता खाड़ी क्षेत्र में भारत की सैन्य कूटनीति की एक नई शुरुआत
2. भारत को चाहिए एक मजबूत मध्य-पूर्व नीति (Middle east policy)
3. खाड़ी देशों में भारत का बढ़ता कद
4. द. एशिया में भारत की नई भागीदारी

भारत-ईरान सम्बन्ध-

1. ईरान के साथ संबंधों में भारत के लिए जितनी संभावनाएं हैं, उतनी ही चुनौतियां भी हैं
2. INDIA IRAN & Recent visit of हसन रूहानी

*अफ्रीका में जड़ें मजबूत करने का मौका

अन्य महत्वपूर्ण घटनाक्रम –

जी-20 समूह और विश्व व्यवस्था में विखंडन

भटक नहीं रहा है ब्रिक्स

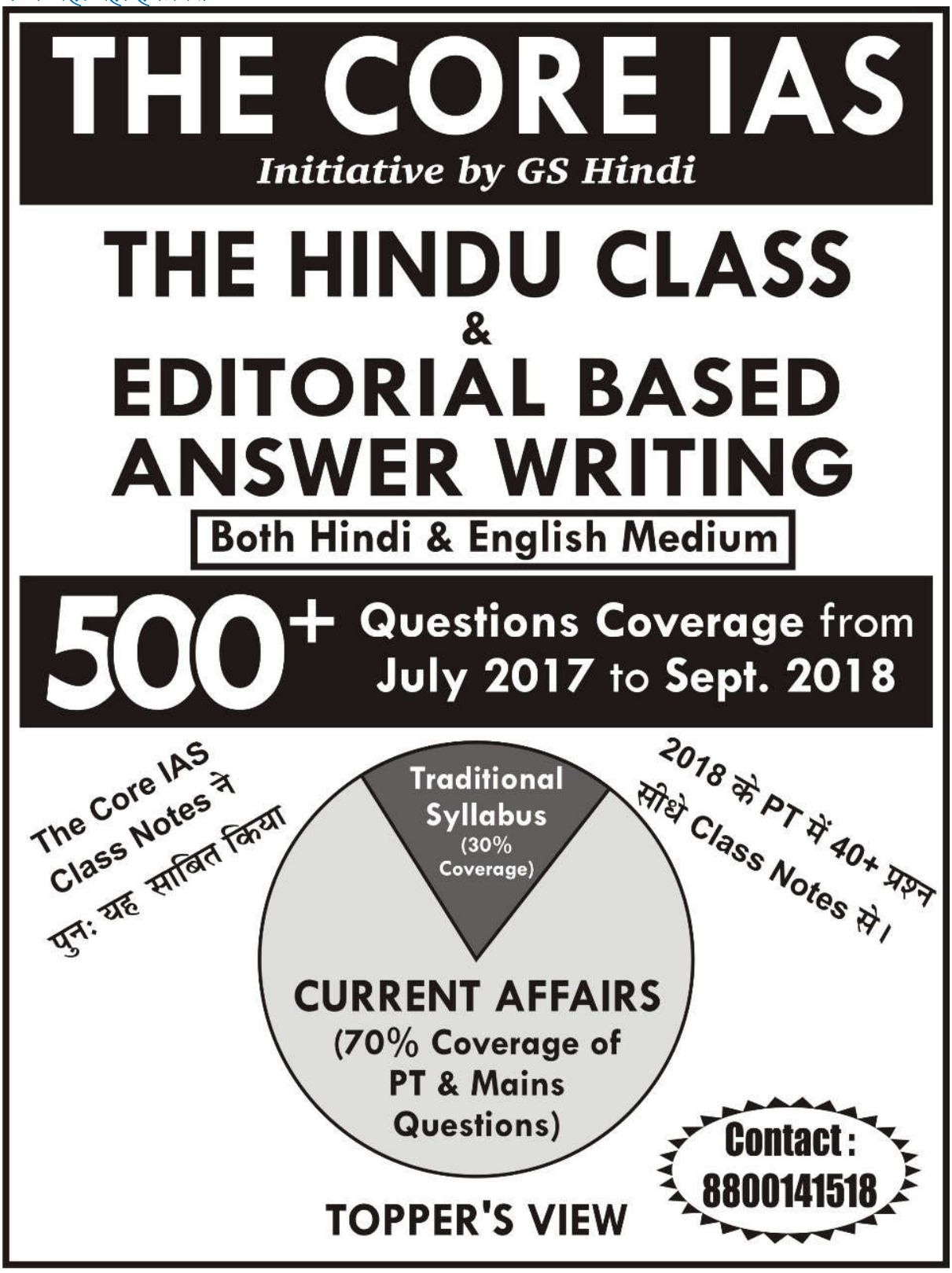

THE CORE IAS

Initiative by GS Hindi

WEEKEND CURRENT AFFAIRS

Batch - Saturday & Sunday

From 16-17 June (8:00 am - 11:30 am)

FAST TRACK MAINS ANSWER WRITING PROGRAMME

Daily 10 Editorial Based Question-Answer

From 18 June (Morning & Evening Batch)

FOUNDATION MAINS ANSWER WRITING PROGRAMME

for Mains 2019

From 18 June - 2 Days / Week (Morning & Evening Batch)

Test Series of G.S & Optional(Geog, History, Hindi,Pol.Sc)

Other Module :

• Environment & Ecology • Society & Social Justice • History • Geog. • Essay

YouTube The Core IAS

Add. : Chamber No. 3, IInd Floor, Batra Complex, Mukherjee Nagar, Delhi-110009

8800141518

9540297983

1. अब सीपीईसी में अफगानिस्तान

चीन, पाकिस्तान और अफगानिस्तान के विदेश मंत्रियों के बीच त्रिपक्षीय वार्ता 26 दिसंबर को बीजिंग मे संपन्न हुई. इस चर्चा में अफगानिस्तान को चीन-पाकिस्तान इकोनॉमिक कॉरिडर (CPEC) में शामिल होने का न्योता दिये जाने की बड़ी खबर सामने आयी है. इस चर्चा के बाद जारी किये संयुक्त वक्तव्य में, चीन के वन बेल्ट वन रोड (ओबोर) प्रोजेक्ट के अंतर्गत आनेवाली परियोजनाओं में और आतंकवाद विरोध मे सहकार्य बढ़ाने पर जोर दिया गया है. क्या इस चर्चा से और इसके परिणामों से भारतीय हितों पर कोई असर होगा, यह सवाल स्वाभाविक है. इस चर्चा के उपरांत ऐसे अनेक विषय सामने आते हैं, जिससे भारत को और गौर से अपनी अफगान भूमिका की समीक्षा करनी होगी|

1. वैसे, अफगानिस्तान के विषय में चीन द्वारा एक सकारात्मक भूमिका लेना एक अच्छी बात हो सकती थी. लेकिन यह मामला बहूत ज्यादा पेचीदा है. भूमंडलीय राजनीति में अनेक वर्षों से एक तटस्थ भूमिका अपनाने के बाद में शी जिनपिंग का चीन देश एक सक्रिय राजनीति करने लगा है. हाल ही में उसने इजराइल और फिलिस्तीन के बीच एक अनौपचारिक शांति वार्ता का आयोजन किया था. इसके साथ ही सीरिया, म्यांमार का रोहिंग्या प्रश्न और भूमंडलीकरण का भविष्य और ऐसे विषयों पर हाल ही में चीन ने एक स्पष्ट और पश्चिमी देशों के विपरीत भूमिका लेने का सिलसिला शुरू किया है.
2. सिपेक और ओबोर, इन दोनों विषयों पर भारत की भूमिका हमेशा से स्पष्ट और सैद्धांतिक रही है. भारत का यह मानना है कि जमीनी तथा सागरी संपर्क और यातायात प्रकल्प किसी तीसरे देश की सुरक्षा और संप्रभुता का हनन करके नहीं बनाये जा सकते. पाक अधिकृत कश्मीर से गुजरनेवाले सिपेक प्रकल्प से भारत की सुरक्षा और अखंडता पर सवाल खड़े किये जा रहे हैं और इसी कारण सिपेक को मानदंड बिंदु बनानेवाले ओबोर में भारत भाग नहीं लेगा. इसके अलावा भी, भारत ने और कई अन्य देशों ने ओबोर के आर्थिक व्यवहार्यता पर सवाल भी उठायें हैं, लेकिन सुरक्षा और संप्रभुता का मुद्दा सबसे अहम है, जिस पर भारत की भूमिका बदलने का कोई संदेह भी चीन ना रखे.
3. अफगानिस्तान में चीन को पिछले कई वर्षों से एक फ्री लोडर यानी कि अन्य देशों के बलिदान के बाद आर्थिक लाभ उठाने के लिए आया हुआ एक देश के रूप में देखा जाता है. जारंज-डेलाराम सड़क और अफगान संसद भवन जैसे मूलभूत सुविधाओं के निर्माण में भारत के बीएसएफ और आईटीबीपी के अनेक जवानों का खून बहा है. साथ ही में 1999 के आईसी-814 के अपहरण में तालिबान का पाकिस्तानी आतंकवादी गुटों को समर्थन देने का इतिहास भी भारत भूला नहीं है. भारत ने हमेशा से ही तालिबान को एक आतंकवादी संगठन के रूप में देखा है. लेकिन, अब चीन वहां आकर तालिबान को शांति प्रक्रिया में शामिल करने की सलाह दे रहा है!

Is this a sudden Movement

यह सब अचानक नहीं हो रहा, बल्कि एक सुनियोजित साजिश का हिस्सा है. जिस भी देश मे चीन ने आर्थिक गतिविधियां बढ़ायी है, वहां के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप जरूर की है. सूडान,जिंबाब्वे, श्रीलंका और ऑस्ट्रेलिया ने भी चीन पर ऐसे आरोप लगाये थे.

Afghan resources and China's interest

अफगानिस्तान की खान में निवेश के साथ ही चीनी निवेश 2010 में शुरू हुए थे. साथ ही वहां के तेल और गैस प्रकल्पों के उत्खनन और विकास तथा निर्यात में भी चीन रुचि रखता है. हाल ही में चीन की एक कंपनी ने वहां रेलवे के निर्माण का कार्य शुरू किया है.

साथ ही तजाकिस्तान से चीन आनेवाले तेल, गैस और अन्य खनिजों के लिए भी अफगानिस्तान और सिपेक का जुड़ना चीन के लिए उपयुक्त होगा.

इन सब से शायद अफगानिस्तान का विकास हो, लेकिन आर्थिक विषयों पर भी श्रीलंका का अनुभव हमारे सामने ताजा है, जिसमें हंबनतोता जैसा सामरिक महत्व वाला प्रोजेक्ट एक चीनी कंपनी को 99 साल के लिए मिल गया है. ओबोर के प्रोजेक्ट पैसे वाले यूरोप के लिए महंगे होते दिख रहे हैं, वहां अफगानिस्तान क्या कर पायेगा?

लेकिन, सबसे बड़ा खतरा चीन के तालिबान के बारे में सोच से है. तालिबान एक आतंकवादी संगठन है और वह अफगानिस्तान की शांति प्रकिया एवं लोक निर्वाचित सरकार को नहीं मानता है. साथ ही, तालिबान पर पाकिस्तान के खुफिया संगठन आईएसआई के साथ मिलकर, भारतीय दूतावास एवं हेरात में कॉन्सुलेट पर हुए आतंकी हमलों में शामिल होने का शक है. ऐसे संगठन का सामान्यीकरण करना एक चिंता का विषय है. अगर तालिबान की ताकत बढ़ी, तो पिछले 16 साल से अफगानिस्तान में जो बदला है, वह सब नष्ट हो सकता है. वैसे भी, पाकिस्तान को चीन आतंकवाद से पीड़ित देश मानता है. तालिबान के साथ मिलकर पाकिस्तान अरसे से भारत के हितों को नुकसान पहुंचाता रहा है और यह अब शायद चीन की मान्यता के साथ होगा. भारत को अपनी सतर्कता और अधिक बढ़ानी होगी और अफगान सरकार के साथ अपने प्रोजेक्टों को और मजबूत करना होगा. आइएनएसटीसी और चाहबहार जैसे प्रोजेक्ट भारत को क्रियाशील भूमिका लेने में मदद करते हैं. साथ ही, काबुल की लोकतांत्रिक सरकार को भी सक्षम बनाने की नीति जारी रखनी होगी

2. भारत के लिए अब इजरायल के साथ रक्षा क्षेत्र से इतर भी संबंध मजबूत करने की जरूरत है

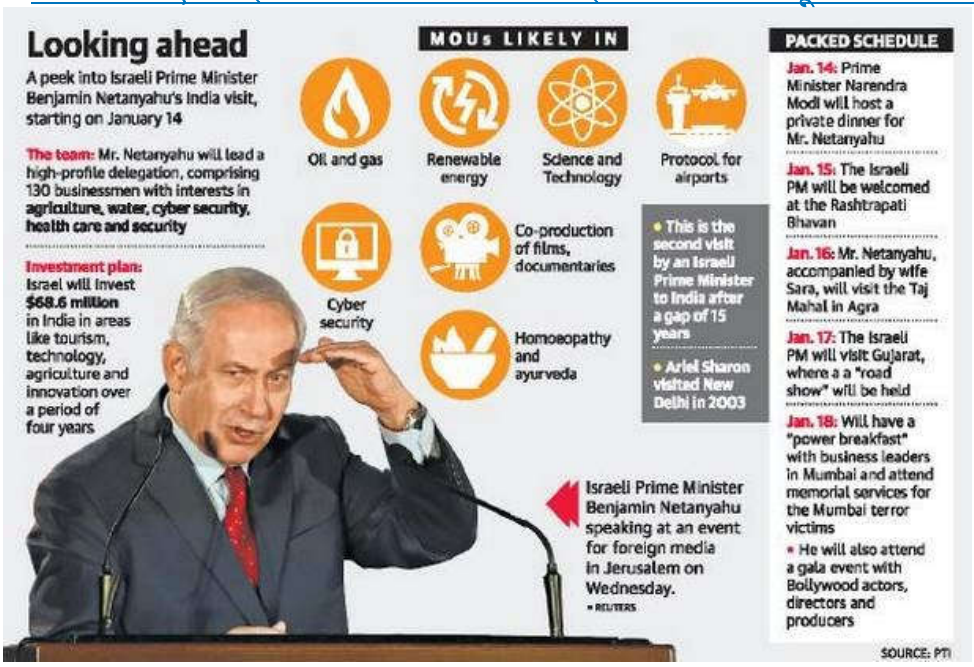

इजरायली प्रधानमंत्री के दिल्ली पहुंचने पर प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का प्रोटोकॉल तोड़कर उनसे मिलना बताता है कि इन दोनों नेताओं के बीच कितनी प्रगाढ़ता है. यह प्रगाढ़ता आज भारत-इजरायल संबंधों में भी देखी जा रही है. बेंजामिन नेतन्याहू के इस छह दिवसीय भारत दौरे से करीब छह महीने पहले ही नरेंद्र मोदी इजरायल गए थे और वह पहली बार था जब भारत के किसी प्रधानमंत्री ने इस पश्चिम-एशियाई देश का दौरा किया. इससे यह भी साफ हो गया था कि भारत इजरायल के साथ अपने कूटनीतिक संबंधों के 25 वर्षों बाद हिचक छोड़कर गर्मजोशी भरे संबंधों की तरफ बढ़ना चाहता है.

Idealism to realism

¬ इस तरह भारत अपनी विदेश नीति में आदर्शवाद से उलट व्यावहारिक रवैया अपनाता दिख रहा है.

¬ वहीं दूसरी तरफ यरुशलम के मुद्दे पर संयुक्त राष्ट्र में अमेरिका के खिलाफ वोट देना भी भारत द्वारा अपनी रणनीतिक स्वायत्ता बरकरार रखने का व्यवहारिक रवैया दिखाता है. इसी का एक पक्ष यह भी है कि इजरायल से खराब संबंध होने के बावजूद ईरान के साथ भारत के दोस्ताना संबंध हैं.

Not just defence but beyond that

¬ इजरायल आज सिर्फ रक्षा क्षेत्र में ही भारत का बड़ा आपूर्तिकर्ता नहीं है, बल्कि यहां दूसरे अन्य क्षेत्रों में तकनीकी सहयोग मुहैया करा रहा है.
¬ यह ऐसा देश है जिसने ड्रिप सिंचाई से अपने यहां मौजूद मरुस्थल को हरभरा बनाया है. यही वजह है कि कृषि और जल संसाधन के मोर्चों पर हमें इस पश्चिम-एशियाई देश से काफी मदद मिल रही है.
¬ प्रधानमंत्री की इजरायल यात्रा के बाद से दोनों देशों के बीच कृषि क्षेत्र से जुड़े सात और उत्कृष्टता केंद्रों में कामकाज शुरू हो चुका है और इसके साथ भारत-इजरायल कृषि परियोजना के तहत ऐसे केंद्रों की संख्या 20 हो गई है.
Agriculture and relation आज भारत की कृषि पर निर्भर आबादी को जल संरक्षण और उसके पुनर्प्रयोग के तौर-तरीके इजरायल से सीखने की जरूरत है. वैसे भी हमारे देश में जल संरक्षण की काफी लचर स्थिति है साथ ही साथ पानी के बंटवारे को लेकर राज्यों के बीच भी जब तक तनाव देखा जाता है. इन परिस्थितियों से निकलने में इजरायल हमारी काफी मदद कर सकता है.
Cyber Security: भारत और इजरायल के बीच और भी क्षेत्रों में सहयोग मजबूत हो सकता है, जैसे कि साइबर सुरक्षा और सीमा पर निगरानी तंत्र. भारत बुनियादी ढांचा विकास और स्मार्ट सिटी परियोजनाओं में भी इजरायली विशेषज्ञता की मदद ले सकता है. यह पश्चिम-एशियाई देश 'स्टार्ट अप' हब के रूप में भी जाना जाता है जो भारत की नई आईटी कंपनियों के आगे बढ़ने और बाजार में टिकने में सहायता कर सकता है.
भारत और इजरायल के संबंध अगर रक्षा क्षेत्रों से इतर तेजी से आगे बढ़ाने हैं तो इसके लिए दोनों देशों के बीच मुक्त व्यापार समझौता जरूरी है. मुक्त व्यापार के जरिए ही भारत की कई कंपनियां इजरायल की साझेदारी में वैश्विक स्तर पर पहचान बनाने की कोशिश कर सकती हैं. आज ये दोनों अर्थव्यवस्थाएं एक दूसरे की पूरक बन सकती हैं. चूंकि इजरायल अमेरिका या यूरोपीय संघ की तरह कोई बड़ी अर्थव्यवस्था नहीं है ऐसे में भारत के लिए उसके साथ साझेदारी आसान होगी. इसीलिए अब भारत और इजरायल के बीच संबंधों का अगला लक्ष्य मुक्त व्यापार समझौता ही होना चाहिए

3. दोस्ती का कारवां: भारत इजरायल

पश्चिम एशिया के उलझे समीकरण किसी भी देश की विदेश नीति की कड़ी परीक्षा लेते हैं। अच्छी बात यह है कि भारत ने इस उलझन को काफी हद तक पार कर लिया है। इजरायल के प्रधानमंत्री बेंजामिन नेतन्याहू की भारत यात्रा का कुलजमा संदेश यही है।
¬ शीत युद्ध के दौर और गुटनिरपेक्षता की राजनीति ने भारत को कई दशक तक इजरायल से दूर रखा था। यहां तक कि दोनों में औपचारिक रिश्ते भी नहीं रहे। इसका जिम्मेदार भले ही आजकल तुष्टीकरण की राजनीति को ठहराया जाता है, लेकिन उस समय जो भी दबाव भारतीय राजनय पर थे, उसके चलते कोई भी सरकार इस नीति को बदल नहीं सकी थी।
¬ कुछ लोग यह भी कहते थे कि ईरान और अरब देशों से होने वाला कच्चे तेल का आयात भी इसमें अपनी भूमिका निभाता था।

Turning point in relation 1992 & 1999

इसे बदलने का साहस 1992 में प्रधानमंत्री नरसिंह राव की सरकार ने दिखाया था। हालांकि राव को उदारीकरण की नई बयार शुरू करने के लिए याद किया जाता है, लेकिन उन्होंने भारतीय विदेश नीति को जो दिया, वह भी कम नहीं है। उन्हीं के शासनकाल में इजरायल में भारतीय दूतावास खोला गया और भारत व इजरायल के औपचारिक रिश्तों की शुरुआत हुई। उसके पहले तक भारतीय पासपोर्ट पर लिखा होता था- 'इजरायल और दक्षिण अफ्रीका के लिए मान्य नहीं'। राव के शासनकाल में यह वाक्य भारतीय पासपोर्ट से पूरी तरह हटा। बेंजामिन नेतन्याहू उस समय भारत यात्रा पर आए हैं, जब दोनों देशों के औपचारिक रिश्तों

की रजत जयंती भी पूरी हुई है।उसके बाद से भले ही नई दिल्ली और तेल अवीव दोनों जगह ही सरकारें बदलती रहीं, लेकिन ये रिश्ते लगातार आगे बढ़ते रहे हैं।

¬ भारत के लिए यह दौर सीमाओं पर लगातार बढ़ते तनाव का भी रहा है और आतंकवाद के गहराते खतरे का भी। इन दोनों ही मोर्चों पर इजरायल का सहयोग भारत के बहुत काम आया है।
¬ भारत इस समय अपनी जरूरत के लिए हथियारों का सबसे ज्यादा आयात इजरायल से ही कर रहा है। इस मामले में इजरायल ने कभी न अमेरिका जैसी आनाकानी की है और न कभी यूरोपीय देशों जैसे नखरे ही दिखाए हैं। ऐसा भी सुनने में नहीं आया कि उसने इसके लिए भारत के सामने कड़ी राजनीतिक या राजनयिक शर्तें रखी हों। हथियार ही नहीं, तकनीक, उद्योग और कृषि के क्षेत्र में भारत के पास इजरायल से लेने के लिए बहुत कुछ है। यह भी कहा जाता है कि भारत के पास इजरायल से लेने लायक सबसे बड़ी चीज है, आत्मनिर्भरता की उसकी जिजीविषा। अपनी जरूरत के हिसाब से तकनीक और सुविधाओं को विकसित करने की जितनी मेहनत इजरायल ने की है, उतनी दुनिया के कम ही देशों ने दिखाई है।दिलचस्प बात यह है कि इस बीच भारत ने फलस्तीन के सवाल पर अपने रुख को बहुत ज्यादा बदला भी नहीं है। यह पिछले दिनों फिर जाहिर हो गया, जब अमेरिका द्वारा यरुशलम को राजधानी की मान्यता देने के मसला संयुक्त राष्ट्र में उठा, तो भारत ने इसके खिलाफ वोट दिया। जाहिर है, भारत के इस रुख ने इजरायल को थोड़ा निराश तो किया होगा, लेकिन लंबे समय में इजरायल ने भारत की फलस्तीन नीति को एक सच की तरह स्वीकार भी किया है। इसके बाद भी अगर दोनों देशों के रिश्ते बढ़ रहे हैं, तो यह दोनों के राजनय की परिपक्वता का एक और उदाहरण है। रिश्तों का यह क्रम उस समय और मजबूत हुआ था, जब भारतीय प्रधानमंत्री मोदी ने इजरायल की यात्रा की थी। और अब इजरायल के प्रधानमंत्री की यात्रा बताती है कि रिश्तों का यह सफर किस तरफ जा रहा है। विश्व राजनीति में इस समय दोनों देश जहां खड़े हैं, दोनों के रिश्तों को आगे बढ़ना ही है।

4.सहयोग संभावनाएं: भारत और इजरायल

भारत और इजरायल के बीच कूटनयिक संबंध 1992 में स्थापित हुए। उसके बाद से दोनों देश निरंतर बहुआयामी साझेदारी का हिस्सा बने हैं। नरेंद्र मोदी पहले भारतीय प्रधानमंत्री हैं जो इजरायल की यात्रा पर गए हैं।

- इजरायल के प्रधानमंत्री बेंजामिन नेतन्याहू के साथ उनकी मुलाकात के बाद यह माना जा सकता है कि वृहद आर्थिक प्रबंधन, व्यापारिक उदारीकरण, पर्यावरण संरक्षण और निवेश के मोर्चे पर दोनों देशों के बीच आपसी सहयोग और अधिक गहरा होगा
- यह मुलाकात द्विपक्षीय कारोबार और निवेश को भी बढ़ावा देगी जो अन्यथा ठहरा रहा है। उदाहरण के लिए दोनों देशों के बीच रक्षा संबंधों में विस्तार की पूरी गुंजाइश है।
- तथ्य यह है कि भारत दुनिया में रक्षा उपकरणों के सबसे बड़े आयातकों में से एक है और इजरायल दुनिया के सबसे बड़े चार निर्यातकों में शामिल है। इससे यह संकेत साफ है कि यह गठजोड़ भविष्य में और अधिक मजबूत हो सकता है।
- दोनों देशों के बीच रक्षा और आतंकवाद उन्मूलन कार्रवाई के लिए ड्रोन और अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी में सहयोग की मदद से आपसी रिश्तों को और मजबूत किया जा सकता है। लेकिन राजनयिक और सामरिक रिश्तों से इतर मोदी की तीन दिवसीय इजरायल यात्रा और अधिक फलदायी हो सकती है, बशर्ते कि यह खेती और जल प्रबंधन तकनीक जैसे क्षेत्रों में भी द्विपक्षीय सहयोग पर ध्यान दे। ये वे क्षेत्र हैं जहां इजरायल को भारी बढ़त हासिल है।

Other areas of cooperation

- पानी का किफायती इस्तेमाल और खारे और खराब पानी का पुनर्चक्रण वह क्षेत्र है जिसमें दोनों देश साझा सहयोग कर सकते हैं। करीब सात दशक पहले जब इजरायल का गठन हुआ तब वहां पानी की भारी कमी थी। उसके भूभाग का 60 फीसदी हिस्सा रेतीला था और बाकी हिस्सा एकदम शुष्क। बारिश में भी लगातार कमी आ रही थी। इसके बावजूद इजरायल ने न केवल अपनी बढ़ती आबादी के लिए जरूरत का पानी जुटाया बल्कि अपने पड़ोसी मुल्कों को पानी का निर्यात करना भी शुरू किया। इजरायल ने खारे समुद्री जल को मीठा बनाया। अब उसकी कुल खपत में एक तिहाई पानी ऐसा ही है। उसने ऐसी तकनीक विकसित की हैं जिसकी मदद से हवा से पानी खींचकर उसे ऐसे स्थानों पर ले जाया जाता है जहां ताजे पानी की कमी है। भारत में ऐसी अनेक जगह हैं और ये तकनीक भारतीयों की पेय जल संबंधी जरूरतों को पूरा कर सकती हैं।
- इसी तरह जब प्रधानमंत्री ने भारतीय कृषिविदों को कम पानी और अधिक फसल का नारा दिया तो यह बात जानना जरूरी है कि इजरायल ने कम से कम कीटनाशकों, उर्वरकों आदि के इस्तेमाल से अधिक से अधिक फसल उगाने में विशेषज्ञता हासिल की है।
- इजरायल की विशेषज्ञता की मदद से भारत कृषि उत्पादकता में जबरदस्त इजाफा कर सकता है। भारत-इजरायल कृषि परियोजना पहले से ही चल रही है। उसमें ऐसी कृषि तकनीकों का प्रदर्शन किया गया है। बहरहाल, इसका प्रभाव मोटे तौर पर छोटी जगहों तक सीमित है क्योंकि इन प्रौद्योगिकी में भारी पूंजी की आवश्यकता होती है। इसकी एक वजह यह भी है कि भारतीय कृषि प्रसार एजेंसियां किसानों तक इसका ज्ञान सही ढंग से पहुंचा नहीं पातीं।
- इसके अतिरिक्त कई छोटे और सीमांत किसान, जिनको ऐसी तकनीक की सबसे अधिक आवश्यकता है, वे इन्हें नहीं आजमा पाते हैं क्योंकि इनमें शुरुआती निवेश बहुत ज्यादा है। भारतीय कृषि शोध संस्थान ड्रिप सिंचाई और अन्य सूक्ष्म सिंचाई व्यवस्थाओं को सस्ता बनाने पर काम कर रहे हैं ताकि वे किसानों को सहज उपलब्ध हों। माना जा रहा है कि प्रधानमंत्री की यह यात्रा संयुक्त भारत इजरायल प्रयास का सबब बनेगी और यह रिश्ता देश के किसानों को बेहतरीन तकनीकी सहयोग दिलाएगा। जिसकी कमी फिलहाल उनको खल रही है

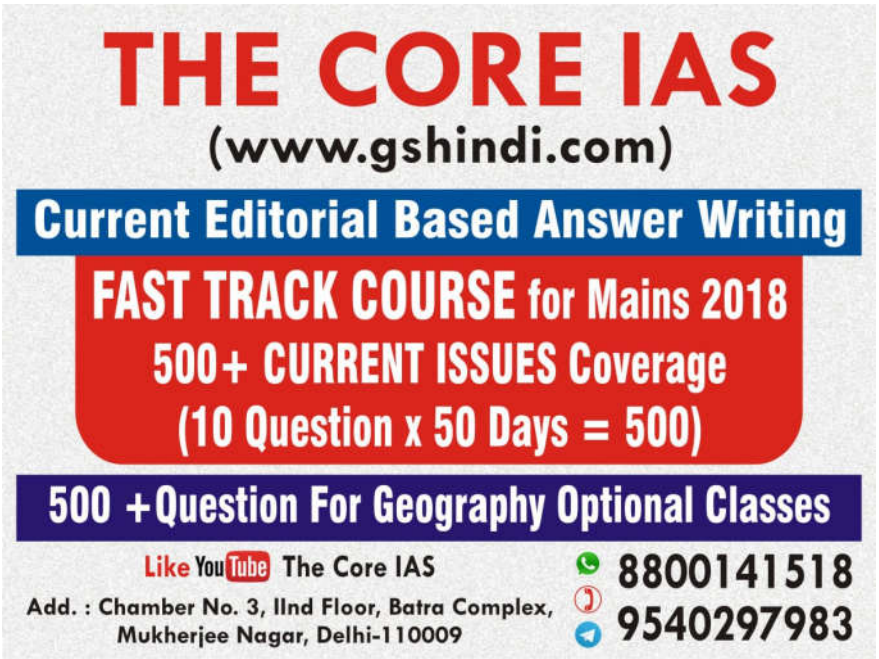

5.**भारत को महंगी भी पड़ सकती है इजरायल से दोस्ती, हो सकते हैं ये नुकसान**

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की तीन दिवसीय इजरायल यात्रा कई मायनों में ऐतिहासिक है. देश के 70 वर्षों के इतिहास में भारतीय प्रधानमंत्री का यह पहला इजरायल दौरा है, जिसमें दोनों देशों के बीच कृषि, विज्ञान, अंतरिक्ष और जल प्रबंधन जैसे अहम क्षेत्रों में कुल 7 समझौते हुए.

- पीएम मोदी अपनी इस यात्रा के दौरान भारत की पूर्ववर्ती सरकारों की तरफ से बरती गई इजरायल से दूरी को रेखांकित करते हुए भविष्य में द्विपक्षीय संबंधों को नई उंचाइयों तक ले जाने की बात कही.
- यहां गौर करने वाली बात यह इस्राइल से राजनयिक संबंधों में गर्मजोशी पूर्व प्रधानमंत्री पीवी नरसिम्हा राव के दौर में शुरू हुई.
- हालांकि तब भी दोनों देशों के बीच के संबंध दबे-छुपे ही रहे. ऐसे में सवाल उठता है कि आखिर भारत इस पश्चिम एशियाई देश से खुले रिश्ते में यूं कतराता क्यों रहा..

इजरायल से मेल-मिलाप में इस संकोच के पीछे दो तर्क बताए जाते हैं.

1. पहला यह कि इस यहूदी देश से करीबी अरब देशों से भारत के संबंधों में तनाव की आशंका,

2. दूसरा देश की मुस्लिम आबादी की नाराजगी.

- दरअसल मुस्लिम राष्ट्रों से घिरे इजरायल से अरब देशों के रिश्ते हमेशा ही कटुता भरे रहे हैं. अरब जगत इजरायल की स्थापता का शुरू से ही विरोध करते रहे हैं और वर्ष 1948में इजरायल की स्थापना के तुरंत बाद इस पर हमला कर दिया था
- हालांकि अरब देशों का वह हमला नाकाम रहा, लेकिन उनके बीच की दुश्मनी खत्म नहीं हुई.
- पीएम मोदी की इस इजरायल यात्रा को पश्चिम एशिया को लेकर भारतीय नीति में अहम बदलाव के तौर पर देखा जा रहा है.
- इससे पहले जब भी कोई भारतीय राजनेता इजरायल गए, तो उन्होंने इसके साथ ही फिलीस्तीन का भी दौरा किया.
- इजरायल और फिलिस्तीन के बीच वर्षों से चले रहे आ रहे टकराव के बीच भारत सरकार की यही कोशिश रही है कि उसे किसी एक का हिमायती न समझा जाए.

ऐसे में पीएम मोदी के अकेले इजरायल यात्रा से जहां कई सामरिक फायदे गिनाए जा रहे हैं, तो वहीं कुछ नुकसान की भी आशंका है.

- सबसे पहला तो यह कि भारत अपनी ऊर्जा जरूरतों के लिए अब भी खाड़ी देशों पर बुहत ज्यादा निर्भर है. ऐसे में अगर इजरायल से भारत की दोस्ती से अगर अरब देश खफा होते हैं, तो भारत को इसके दुष्परिणाम झेलने पड़ सकते हैं.
- वहीं भारत की विदेशी पूंजी भंडार में बड़ा हिस्सा इन्हीं अरब देशों से आता है. एक अनुमान के मुताबिक, करीब 80 लाख भारतीय रोजगार के लिए खाड़ी देशों पर निर्भर हैं और वहां से अपने वेतन का बड़ा हिस्सा अपने परिवार के पास भारत भेजते हैं. ऐसे में अरब देशों की नाराजगी इन परिवारों के लिए नुकसानदेह साबित हो सकती है.

यहां गौर करने वाली बात यह है कि इजरायल-फिलिस्तीन के झगड़े में भारत हमेशा ही फिलिस्तीन के पक्ष में खड़ा दिखा. भारत ने इजरायल के गठन के प्रस्ताव का भी विरोध किया था. वहीं भारत-पाकिस्तान के बीच तनाव के माहौल में अरब देशों ने भी दोस्ती का खयाल रखते हुए कभी पाकिस्तान की खुली तरफदारी नहीं की और ना ही कश्मीर विवाद में हस्तक्षेप की बात कही.

इसके अलावा अंतरराष्ट्रीय मंच पर जब भी भारत घिरता पाया गया, तो वहां उसकी खुलकर मदद की. ऐसे में भारत द्वारा इस तरह फिलिस्तीन इंतेफादा (जन आंदोलन) को दरकिनार कर इजरायल से दोस्ती के नतीजतन अरब देश भी ऐसे विवादों की स्थिति में भारत के पक्ष में खड़ा होने से परहेज कर सकते हैं.

2.(III) भारत-फिलीस्तीन संबंध-संतुलन India palastine and Israel

प्रधानमंत्री का वेस्ट बैंक में रमल्ला जाना किसी भी भारतीय प्रधानमंत्री द्वारा फिलीस्तीन की इस राजधानी का पहला दौरा था. इसके साथ ही इस्राइली प्रधानमंत्री बेंजामिन नेतन्याहू से उनकी प्रगाढ़ मित्रता की पृष्ठभूमि में यह भारत द्वारा फिलीस्तीनी हितों के सतत समर्थन का संकेत भी करता है.

India Palastine relation

भारत ने शुरू से ही फिलीस्तीन का समर्थन किया है. अरब देशों के बाहर हम दुनिया के पहले वैसे देश थे, जिसने फिलीस्तीन मुक्ति संगठन (पीएलओ) को फिलीस्तीनियों का एकमात्र प्रतिनिधि होने की मान्यता दी. अरब देशों की ही तरह, भारत ने भी इस्राइल के साथ औपचारिक राजनयिक संबंध स्थापित नहीं किये.

Aftermath of Cold war and relation

पर शीतयुद्ध के पश्चात अमेरिका के साथ निकटता बढ़ाना भारत की मजबूरी हो गयी और इसके साथ ही इसने यह भी महसूस किया कि इस्राइल को दरकिनार कर ऐसा नहीं किया जा सकता. फिर तो भारत ने इस्राइल के साथ अपनी निकटता सायास विकसित की और 1992 में उसके साथ पूर्ण राजनयिक संबंध भी स्थापित किया. इस्राइल के साथ अपने घनिष्ठ होते सहयोग के बावजूद भारत ने उसे कभी भी अधिक प्रचारित न किया, क्योंकि उससे स्वदेश के मुसलिम अल्पसंख्यकों की नाराजगी मोल लेने का खतरा था.
¬ पर वर्ष 2014 में केंद्र में भाजपा के सत्तासीन होने के साथ स्थितियां बदल गयीं. पिछले वर्ष मोदी की इस्राइल यात्रा के बाद से ही अनेक समीक्षकों ने उससे मोदी की बढ़ती निकटता को संघ परिवार की मुसलिम-विरोधी नीतियों का ही एक विस्तार मानना आरंभ कर दिया.

- पिछले महीने नेतन्याहू की भारत यात्रा के समय एक बार फिर उसी मत की पुष्टि होती बतायी गयी. पर, जो कुछ वास्तव में चिंताजनक है, वह यह कि हिंदूवादी शक्तियों के पैरोकारों को उन फिलीस्तीनियों के सिर्फ मुस्लिम होने की वजह से उनके प्रति अपनी नफरत के इजहार से भी गुरेज न हुआ, जो इस्राइली सेना के द्वारा प्रतिदिन प्रताड़ित होते रहते हैं.
- हालांकि, फिलीस्तीन में बोलते हुए प्रधानमंत्री ने यह कहा कि 'मैं अपने साथ भारतीयों की सद्भावना तथा उनका अभिवादन लाया हूं,' मगर यह केवल एक राजनयिक मजबूरी में कहा गया वक्तव्य मात्र बनकर न रह जाये, इसके लिए मोदी को स्वदेश में अपने समर्थक वर्गों को भी फिलीस्तीन हितैषी बनाना होगा.
- इसमें कोई शक नहीं कि किसी भी देश के वैदेशिक संबंध उसकी गृह नीति के ही अक्स होते हैं, किंतु फिलीस्तीन के साथ भारत के संबंधों को हिंदू-मुस्लिम नजरिये से देखना न तो राष्ट्रहित में होगा और न ही भारत के विदेश मंत्रालय में बैठे सामरिक विशेषज्ञों के मतानुकूल ही. यह भारत का विवेक ही था, जिसके चलते इसने संयुक्त राष्ट्र में यरुशलम को इस्राइल की राजधानी बनाने के डोनाल्ड ट्रंप की योजना के विरोध में मतदान किया.

Dehyphanisation in Relation

सत्ता में आने के बाद, सरकार ने यह स्पष्ट कर दिया कि वह इस्राइल एवं फिलीस्तीन के साथ अपने संबंधों को परस्पर असंलग्न करने की कोशिश करेगी. अपनी इसी ऐतिहासिक यात्रा में मोदी ने वेस्ट बैंक तक पहुंचने के लिए जॉर्डन होकर जानेवाले मार्ग का चयन किया, न कि ज्यादातर पश्चिमी राजनेताओं की भांति इस्राइल होकर. ज्ञातव्य है कि फिलीस्तीन में इस्राइल किसी हवाई अड्डे के परिचालन की अनुमति नहीं देता. यह एक अहम संकेत है, क्योंकि पिछले वर्ष अपनी इस्राइल यात्रा के ही वक्त मोदी ने फिलीस्तीन का भी दौरा कर लेने से जान-बूझकर परहेज किया. वर्ष 2015 में जब तत्कालीन राष्ट्रपति प्रणब मुखर्जी ने पश्चिमी एशिया की यात्रा की, तो वे जॉर्डन एवं फिलीस्तीन के दौरे के बाद इस्राइल पहुंचे थे. हालांकि, फिलीस्तीन के कट्टर समर्थक यह कहा करते हैं कि इस्राइल द्वारा वहां अंतरराष्ट्रीय कानूनों और मानवाधिकारों के सतत उल्लंघन की वजह से भारत को इस्राइल के साथ या तो कोई संबंध नहीं रखने चाहिए, अथवा उन्हें सीमित कर देना चाहिए. लेकिन, यह हमेशा याद रखना चाहिए कि मूल्यों तथा अधिकारों के समस्त जयघोष के बावजूद विदेशी संबंध यथार्थवाद की धरातल पर स्थित और जमीनी सियासत में बद्धमूल होते हैं.

दूसरी बात यह है कि इस्राइल के साथ भारत के संबंध कोई अचानक ही विकसित नहीं हुए हैं और इसका अब सिर्फ इसलिए विरोध नहीं किया जाना चाहिए कि नरेंद्र मोदी की सरकार उसे छिपा-छिपी के उस दौर से बाहर निकालकर दिन के उजाले में ले आयी है.कोई इसे पसंद करे या नहीं, भारत के सुख-दुख में इस्राइल एक भरोसेमंद दोस्त बनकर उभरा है.

इसके अलावा, सऊदी अरब के शाह सहित अनेक अरब देश इस्राइल के साथ द्विपक्षीय संबंध विकसित करने में लगे हैं, भले ही वे इसे प्रचारित नहीं करते. भारत ने अब तक इस्राइल, सऊदी अरब तथा ईरान के साथ अपने द्विपक्षीय संबंधों को बड़ी नजाकत से संतुलित कर रखा है, क्योंकि उनमें से कोई भी किसी को नहीं सुहाता. पर, इसमें कोई संदेह नहीं कि इस्राइल और फिलीस्तीन के मामले में ऐसा करना कहीं अधिक कठिन है.

4. भारत-आसियान दोस्ती का नया दौर

India ASEAN Relation: looking into History

भारत-आसियान रिश्तों की रजत जयंती मनाने की तैयारी के बीच हम इसकी अनदेखी नहीं कर सकते कि दक्षिण-पूर्व एशिया के साथ भारत के रिश्ते दो हजार वर्षों से भी अधिक पुराने हैं।
¬ इतिहास में स्पष्ट प्रमाण मिलते हैं कि प्राचीन भारत और कंबोडिया, मलेशिया और थाईलैंड के बीच व्यापार हुआ करता था।

¬ इन प्राचीन संपर्कों ने दक्षिण-पूर्व एशियाई संस्कृति, परंपराओं और भाषाओं को प्रभावित किया। फिर चाहे वह कंबोडिया में अंकोरवाट मंदिर परिसर हो या इंडोनेशिया में बोरोबुदूर और प्रंबनन मंदिर या फिर मलेशिया के कई स्थल, इन सभी जगहों पर भारतीय हिंदू-बौद्ध प्रभाव की छाप साफ नजर आती है।
¬ इंडोनेशिया, म्यांमार व थाईलैंड सहित कई दक्षिण-पूर्व एशियाई देशों में रामायण को खासा महत्व दिया जाता है। सिंगापुर के मलय नाम की उत्पत्ति भी संस्कृत भाषा से ही हुई है, जिसका अर्थ होता है लॉयन सिटी यानी सिंह का शहर।

Relation in recent times

- भारत 1992 में आसियान की एक श्रेणी में संवाद साझेदार बना और 1995 में पूर्ण रूप से संवाद साझेदार।
- समय के साथ भारत-आसियान रिश्ते और परवान चढ़ते गए और 2012 में दोस्ती की बीसवीं वर्षगांठ के अवसर पर रणनीतिक साझेदारी में बदल गए।
- दोनों पक्ष आज आसियान के विभिन्न् राजनीतिक, सुरक्षात्मक, आर्थिक एवं सामाजिक-सांस्कृतिक पहलुओं पर साथ मिलकर काम कर रहे हैं।
- भारत के प्रधानमंत्री की Áct East Policy में भी व्यापार, संपर्क और संस्कृति की तिकड़ी पर जोर दिया गया है। इस मंत्र के माध्यम से वह आसियान के साथ सक्रियता को और धार देना चाहते हैं जो हमारे बहुस्तरीय और व्यापक सहयोग को दर्शाता है। '
- हमारे पास सहयोग के लिए लगभग 30 प्लेटफॉर्म हैं जिनमें एक वार्षिक शिखर सम्मेलन और सात मंत्रिस्तरीय संवाद मंच हैं। चाहे आसियान के नेतृत्व में आसियान क्षेत्रीय मंच हो या आसियान रक्षामंत्रियों का सम्मेलन या फिर पूर्वी एशिया सम्मेलन, भारत ने इन आयोजनों में हमेशा बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया है।
- समय के साथ दोनों पक्षों के बीच व्यापार में भी बहुत तेजी आई है। इसमें आसियान-भारत मुक्त व्यापार क्षेत्र यानी एआईएफटीए जैसे समझौते की अहम भूमिका रही है।
- आसियान-भारत व्यापार 1993 के 2.9 अरब डॉलर से उछलकर 2016 में 58.4 अरब डॉलर हो गया। सामाजिक, सांस्कृतिक मोर्चे पर भी आसियान-भारत छात्र विनिमय कार्यक्रम और दिल्ली डायलॉग ने दोनों पक्षों के बीच जनसंपर्क को और तेजी दी है। इन मंचों के माध्यम से हमारे युवा, अकादमिक और कारोबारी जगत के लोगों को एक-दूसरे से मुलाकात के दौरान सीखने-समझने का अवसर मिला है, जिससे रिश्ते और मजबूत हुए हैं।
- आसियान-भारत संबंधों की रजत जयंती मनाने के लिए तमाम कार्यक्रम किए जा रहे हैं। हाल में सिंगापुर में आयोजित प्रवासी भारतीय दिवस में भारतवंशियों के योगदान को सराहा गया। भारत के गणतंत्र दिवस समारोह में आसियान की भागीदारी से दोनों पक्षों की उत्सवधर्मिता चरम पर पहुंच रही है। गणतंत्र दिवस परेड हेतु मुख्य अतिथि के तौर पर आमंत्रण आसियान नेताओं के लिए बहुत सम्मान की बात है।

Changing Geo politics & India Asean

भू-राजनीतिक अस्थिरता ने आसियान को भारत जैसे सहयोगी के साथ गलबहियां बढ़ाने की दिशा में नई ऊर्जा और नजरिया दिया है।

- कई अहम पैमानों पर भारत और आसियान की सोच भी एकसमान है। क्षेत्र में शांति और सुरक्षा के साथ ही खुली, संतुलित और समावेशी अवधारणा पर भी दोनों एकमत हैं। भारत की भौगोलिक स्थिति रणनीतिक रूप से बेहद अहम है।
- यह हिंद महासागर और प्रशांत महासागर के बीच कई प्रमुख समुद्री मार्गों के बीच स्थित है। ये समुद्री मार्ग तमाम आसियान देशों के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण व्यापारिक मार्ग भी हैं। ऐसे में व्यापार को सुगम बनाए रखने के लिए इन समुद्री मार्गों की सुरक्षा दोनों पक्षों के लिए समान रूप से आवश्यक है।

Combined Weight of India ASEAN

आसियान और भारत की कुल आबादी करीब 180 करोड़ है, जो दुनिया की एक चौथाई आबादी के बराबर है। हमारा सम्मिलित जीडीपी भी 4.5 लाख करोड़ डॉलर से अधिक है। वर्ष 2025 तक भारत दुनिया का पांचवां सबसे बड़ा उपभोक्ता बाजार बन जाएगा तो दक्षिण-पूर्व एशिया में भी मध्यवर्ग का दायरा दोगुना बढ़कर 16.3 करोड़ होने का अनुमान है। दोनों पक्षों को जनसांख्यिकीय लाभांश का भी फायदा हासिल है, क्योंकि इनकी अधिकांश आबादी युवा है। आसियान व भारत में इंटरनेट उपभोक्ताओं की मांग भी तीव्र गति से बढ़ रही है जिससे डिजिटल अर्थव्यवस्था तेजी से आगे बढ़ सकती है। दोनों पक्षों में इतनी अनुकूलता होने के बावजूद संबंधों को नया आयाम देने के लिए अभी भी काफी गुंजाइश है। आसियान के विदेशी व्यापार में भारत की हिस्सेदारी महज 2.6 फीसदी है जिसे और बढ़ाया जा सकता है।

परस्पर लाभ के लिए तीन सुझाव

¬ पहला यह कि व्यापार और निवेश को और गति देने के लिए भारत और आसियान को दोगुनी गति से प्रयास करने चाहिए। हमें मुक्त व्यापार सहित मौजूदा रास्तों को समय रहते सुधारने के साथ उन्हें प्रासंगिक बनाए रखना होगा। मौजूदा एआईएफटीए से भी बढ़कर उच्च स्तरीय क्षेत्रीय व्यापक आर्थिक साझेदारी यानी आरसीईपी जैसी पहल की ओर कदम बढ़ाने होंगे। इससे ऐसे एकीकृत एशियाई बाजार का निर्माण होगा जिसमें दुनिया की लगभग आधी आबादी और एक तिहाई जीडीपी शामिल होगी। दोनों ओर से नियम-कानूनों को सुसंगत बनाना होगा और भारत की एक्ट ईस्ट नीति को सफल बनाने के साथ ही क्षेत्र में निर्यात बढ़ाने के मकसद से मेक इन इंडिया को भी हरसंभव मदद देना होगी।
¬ दूसरा सुझाव यह है कि जल, थल और वायु परिवहन के मोर्चे पर सुधार हो। इससे हमारी जनता को बहुत फायदा होगा। इस दिशा में भारत के प्रयास सराहनीय हैं। वह भारत-म्यांमार-थाईलैंड हाईवे के विस्तार के साथ ही आसियान के साथ बेहतर कनेक्टिविटी के लिए बुनियादी ढांचा विकास हेतु एक अरब डॉलर की राशि के लिए सहमत हुआ है।

¬ तीसरा सुझाव डिजिटल कनेक्टिविटी सहयोग का है। यह एक महत्वपूर्ण पहलू है जो बेहतर भविष्य की इबारत रखेगा। भारत में आधार से जुड़ा तंत्र नए अवसर तैयार कर रहा है। साझेदारी के लिए हमें नित नए आयामों की तलाश में जुटे रहना चाहिए। आसियान का अध्यक्ष होने के नाते सिंगापुर का एक लक्ष्य आसियान स्मार्ट सिटी नेटवर्क तैयार करना भी है, जिसमें भारत हमारा स्वाभाविक साझेदार बन जाता है। भारत ने 100 स्मार्ट सिटी विकसित करने का लक्ष्य तय किया है। एक शहरी-राष्ट्र होने के नाते हम अपने अनुभव से इसमें भारत की पूरी मदद करेंगे। आसियान का अध्यक्ष होने के नाते सिंगापुर भारत के साथ रिश्तों को प्रगाढ़ करने के लिए प्रतिबद्ध है। अगर दोनों पक्ष अपने ऐतिहासिक और सांस्कृतिक जुड़ाव से मौजूदा चुनौतियों का समाधान निकालकर भविष्य के लिए बेहतर बुनियाद रखते हैं तो हमारी आने वाली पीढ़ियां ही इससे सबसे अधिक लाभान्वित होंगी

चीन के मामले में हर तरफ से सतर्क रहते हुए सोच-विचार कर कदम उठाना होगा।

Changing scenario and India China relation:

भारत और चीन को यह कहने की क्या जरूरत पड़ गई कि उनकी स्थिति अब 1962 जैसी नहीं है। भारत और चीन ही क्या, दुनिया के एकाध देश को छोड़कर किसी भी देश की स्थिति 55 साल पहलेजैसी नहीं रही होगी।
चीन के साथ सीमा विवाद के गहराते संकट के बीच एक-
दूसरे को धमकी देकर न चीन को कुछ हासिल होने वाला है और न भारत को। पहले तिब्बत फिर अरुणाचल प्रदेश औरअब सिक्किम सीमा पर चीन के हस्तक्षेप ने दोनों देशों के बीच तनाव बढ़ाया है।

Contentious issue in Sikkim:

- भारत-चीन के बीच सिक्किम में 220 किलोमीटर लंबी सीमा सदा से विवाद का कारण रही है।
- इस इलाके में सीमा रेखा के स्पष्ट नहीं होने से दोनों देशों के सैनिकों के बीच झड़प होती रहती है।
- हाल के दिनों में अमरीका के साथ भारत की बढ़ती नजदीकियां चीन को रास नहीं आ रही हैं
- चीन रह-रहकर भारत को उकसाने वाली कार्रवाई करता रहा है।
- चीन कभी ब्रह्मपुत्र नदी पर बांध बनाकर पानी अपनी तरफ मोड़ कर विवाद को हवा देता है तो कभी सिक्किम में सड़क बनाकर अपनी कुटिल चाल चलता है। चीन की असली चिंता अंतरराष्ट्रीयजगत में भारत की बढ़ती ताकत है
- पिछले एक दशक में भारत ने जिस तरह प्रगति की राह पकड़ी है, चीन उसे पचा नहीं पा रहा। चीन भारत के साथ ही विवाद में नहीं उलझा है।
- दक्षिण चीन सागर पर एकाधिकार को लेकर उसकी वियतनाम, फिलीपींस, ताइवान और दक्षिण पूर्व एशियाई देशों के साथ ठनी हुई है। मामला अंतरराष्ट्रीय पंचायत तक पहुंच चुका है। लेकिन चीनअपना अडियल रवैया छोडऩे को तैयार नहीं।
- चीन दूसरे देशों के प्राकृतिक संसाधनों पर कब्जा करना चाहता है। आज उत्तर कोरिया को छोड़ दुनिया में कोई ऐसा देश नहीं जिसे चीन अपना विश्वस्त सहयोगी देश कह सके।
- चीन-पाकिस्तान इकॉनोमिक कॉरिडोर के निर्माण को लेकर चीन भारत को परेशान करना चाहता है।

Strategy of India:

भारत 1962 के बाद से ही चीन की चालों को समझ भी रहा है और उसके अनुकूल जवाब भी दे रहा है। लेकिन चीन है कि अपनी हठधर्मिता छोडऩे को तैयार ही नहीं। एक तरफ वह भारत के साथदोस्ती का हाथ बढ़ाता है तो दूसरी तरफ विवादों को हवा भी देता रहता है। चीन के मामले में एक बार हम धोखा खा चुके हैं लिहाजा हर तरफ से सतर्क रहते हुए सोच-विचार कर कदम उठाना होगा।

भारत को अपनी तैयारियां पूरी रखनी होगी। भारत-चीन सीमा का सच यह है कि चीन ने वहां पर रेल और सड़क समेत एक बड़ा सैन्य इन्फ्रास्ट्रक्चर खड़ा कर लिया है। लेकिन दूसरी तरफ भारत इसमामले में बहुत पीछे है। योजनाएं तो भारत की तरफ से भी बनी हैं, लेकिन उन पर अमल नहीं हो सका। भारत ने लद्दाख तक बारहमासी सड़क के निर्माण की जो परियोजना बनाई थी, वह अभी तकरोहतांग सुरंग में ही अटकी हुई है। यह ठीक है कि चीन से लगी हुई भारत की सीमाओं पर अभी भी उस तरह का तनाव नहीं है, जिस तरह का पाकिस्तान की सीमा पर है, उस तरह की आशंकाएं भीफिलहाल नहीं हैं, लेकिन हमें उतनी तैयारियां तो करनी ही पड़ेंगी, जितनी दूसरी तरफ हो रही हैं। उतनी ही तेजी से भी।

वर्तमान समय में भारत- चीन के बीच उपजी तनातनी के पीछे क्या कारण हैं? सीमा सम्बन्धी विवाद और भू- सामरिक दृष्टिकोण पर विचार व्यक्त कीजिये।

दरअसल सिक्किम-भूटान-तिब्बत मिलन स्थल पर चीनी गतिविधियां ताजा विवाद की मुख्य वजह मानी जा रही है.

- इस तनातनी के पीछे भू-सामरिक दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण भारतीय जमीन के उस टुकड़े को माना जा रहा है जिसे 'चिकन नेक' के नाम से जाना जाता है. चीन, भारत को इस क्षेत्र में घेरना चाहता है.
- इसलिए वह सिक्किम-भूटान और तिब्बत के मिलन बिंदु स्थल (डोका ला) तक एक सड़क का निर्माण करने की कोशिश कर रहा है जिस पर भारत को आपत्ति है.
- इस सड़क का निर्माण वह भूटान के डोकलाम पठार में कर रहा है.

=> डोका- ला पठार चीन, भूटान और भारत का मिलन बिंदु -

- इस क्षेत्र के अधिकार को लेकर चीन और भूटान के बीच विवाद है. चीन इस क्षेत्र को डोंगलांग कहता है और प्राचीन काल से अपना हिस्सा बताता है. इसीलिए अपनी सेना के गश्ती दल को वहां भेजता रहता है.
- दरअसल चीन की मंशा डोकलाम से डोका ला तक इस सड़क के निर्माण से दक्षित तिब्बत में स्थित चुंबी घाटी तक अपनी पैठ को बढ़ाना है.
- यह घाटी हंसिए की तरह है जो सिक्किम और भूटान को अलग करती है.
- दरअसल यदि डोका ला तक चीन सड़क का निर्माण कर लेता है तो उसकी सेना को यहां से तकरीबन 50 किमी दूर संकरे सिलिगुड़ी कॉरीडोर तक सामरिक बढ़त मिल जाएगी जोकि पश्चिम बंगाल का हिस्सा है. इसी कॉरीडोर को कथित रूप से 'चिकन नेक' कहा जाता है और यह भारत की मुख्य भूमि को उत्तर-पूर्व राज्यों से जोड़ने का एकमात्र जरिया है.

=>चुंबी घाटी का पेंच :-

- रक्षा जानकारों के मुताबिक चुंबी घाटी में चीन की गतिविधियां भारत के लिए चिंता का सबब है.
- यह मानचित्र में हंसिए की तरह का हिस्सा है जो भारत के 'चिकन नेक' से ठीक ऊपर स्थित है.
- अभी इस क्षेत्र में भू-सामरिक लिहाज से भारत बेहतर स्थिति में है लेकिन डोकलाम से डोका ला तक सड़क निर्माण कर चीन, इन देशों के मिलन बिंदु स्थल तक पहुंचकर भारत को घेरना चाहता है.

चीन का यह कदम हिंद महासागर में भारत की चिंता को बढ़ाने वाला है

- चीन दुनिया में अपनी सैन्य शक्ति का तेजी से विस्तार करने में लगा है. समाचार एजेंसी रॉयटर्स के अनुसार उसने अफ्रीकी देश जिबूती में अपना पहला नौसैनिक अड्डा चालू करने के लिए सैनिकों कोरवाना कर दिया है.
- हिंद महासागर के उत्तर-पश्चिम किनारे पर बसे जिबूती में चीन के सैन्य ठिकाने को भारत को घेरने की 'स्टिंग ऑफ पर्ल्स' नाम की रणनीति से जोड़कर देखा जा रहा है.
- इसके तहत चीन बांग्लादेश, म्यांमार और श्रीलंका सहित अन्य देशों में सैन्य ठिकाने और संपत्तियां विकसित कर भारत को घेरना चाहता है.

Military base of china in Indian ocean

चीन ने जिबूती में सैन्य ठिकाना बनाने का काम पिछले साल शुरू किया था. हालांकि चीन की सरकारी न्यूज एजेंसी शिन्हुआ ने इससे इनकार किया है कि यह सैन्य ठिकाना है. उसके मुताबिक यहअफ्रीका और पश्चिम एशिया में मार्गों की रक्षा करने के अलावा शांति सैनिक और मानवीय सहायता उपलब्ध कराने में मदद करने वाला ठिकाना है. वहीं, चीन के विदेश मंत्रालय के प्रवक्ता गेंग शुआंगका कहना है कि इससे चीन, अफ्रीका और वैश्विक स्तर पर शांति कायम करने में ज्यादा कारगर भूमिका निभा पाएगा.

उधर, चीन के सरकारी अखबार ग्लोबल टाइम्स का कहना है कि यह चीन का सैन्य अड्डा ही है, जो उसने अपनी सुरक्षा पुख्ता करने के लिए बनाया है, न कि दुनिया को नियंत्रित करने के लिए. चीन द्वाराअन्य देशों में ऐसे सैन्य अड्डे विकसित करने की संभावना जताई जा रही है. पिछले महीने अमेरिकी रक्षा विभाग ने संसद में पेश अपनी सालाना रिपोर्ट में कहा था कि चीन भविष्य में पाकिस्तान जैसे उनतमाम मुल्कों में सैन्य ठिकाने बना सकता है, जिनके साथ उसकी मित्रता है

चीन के आर्थिक हितों पर डोकलाम विवाद बेअसर

भारत और चीन के बीच सिक्किम क्षेत्र में सीमा विवाद को लेकर बनी तनातनी से ऐसी आशंकाएं जताई जा रही हैं कि चीन इस स्थिति में किस तरह का रवैया अपनाएगा? चीन के नेतृत्व ने कहा है कि जब तक भारतीय सैनिक उसके इलाके से नहीं हटते हैं, तब तक भारत के साथ किसी भी तरह की बातचीत नहीं होगी

Reply of India

इसके जवाब में भारत के विदेश सचिव ने कहा है कि आपसी मतभेदों को दोनों पड़ोसी देशों के बीच विवाद नहीं बनने दिया जाएगा।

लेकिन इसके बाद भी गतिरोध बना हुआ है जिससे भारत के साथ चीन के आर्थिक रिश्तों पर पडऩे वाले असर का मुद्दा खासा अहम हो गया है। व्हाट्सऐप पर सक्रिय तमाम समूहों समेत विभिन्न सोशल मीडिया मंचों पर पहले ही यह अभियान शुरू हो चुका है कि भारतीय नागरिक चीन में उत्पादित वस्तुओं को खरीदने से इनकार कर इस पड़ोसी देश को करारा सबक सिखा सकते हैं।

यह अभियान राष्ट्रवादी भावनाओं से ओतप्रोत है। लेकिन इस तरह की मुहिम का चीनी उत्पादों के निर्यात या निवेश पर क्या वाकई में कोई गंभीर असर पड़ सकता है? इसका आकलन करने के लिए चीन के साथ भारत के व्यापार और भारत में चीनी निवेश संबंधी आंकड़ों पर एक नजर डालना जरूरी होगा।

- इसमें कोई शक नहीं है कि भारत में चीन से होने वाले निवेश में लगातार बढ़ोतरी हो रही है। वर्ष 2011 में भारत में निवेश करने वाले देशों में चीन 37वें स्थान पर हुआ करता था लेकिन अब यह17वां सबसे बड़ा विदेशी निवेशक बन चुका है।
- देखने में यह आंकड़ा तीव्र वृद्धि को दर्शा रहा है लेकिन भारत में चीन के कुल निवेश का आकार और सालाना पूंजी प्रवाह वास्तव में काफी कम है।
- भारत में होने वाले कुल विदेशी निवेश में चीन की हिस्सेदारी या चीन की तरफ से विदेश में होने वाले निवेश में भारत को मिलने वाली राशि लगभग नगण्य है।
- अप्रैल 2000 और मार्च 2017 के बीच भारत में कुल 332 अरब डॉलर का विदेशी निवेश हुआ। इनमें चीन की हिस्सेदारी महज 1.63 अरब डॉलर ही रही है। वर्ष 2010-11 में चीन ने भारत में केवल20 लाख डॉलर का निवेश किया था। उस साल भारत में हुए 14 अरब डॉलर के प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफडीआई) को देखें तो चीन का अंशदान बहुत ही कम था।
- निश्चित रूप से भारत में चीन का निवेश पिछले कुछ वर्षों में बढ़त पर रहा है। वर्ष 2014-15 में यह 49.5 करोड़ डॉलर था तो 2015-16 में 46.1 करोड़ डॉलर रहा था। लेकिन चीनी निवेश में यह बढ़ोतरी तब हुई थी जब भारत में विदेशी निवेश काफी तेजी से बढ़ रहा था। असल में, भारत में चीनी निवेश में बढ़ोतरी की रफ्तार भारत में हुई कुल एफडीआई वृद्धि से काफी धीमी थी। वर्ष 2014-15 में भारत में कुल 31 अरब डॉलर और 2015-16 में 40 अरब डॉलर का एफडीआई आया था।
- चीन से दूसरे देशों में करीब 100 अरब डॉलर का एफडीआई होने का अनुमान है। इसमें भारत का हिस्सा 0.5 अरब डॉलर से भी कम है।

ऐसे में क्या वाकई में चीन को भारत के साथ सीमा विवाद बढऩे पर अपने विदेशी निवेश के बारे में चिंतित होने की जरूरत है?

- चीनी अधिकारियों के दिमाग में यह बात भी आएगी कि वित्त वर्ष 2016-17 में तो भारत में चीन का एफडीआई फिर से कम होकर 27.7 करोड़ डॉलर पर आ गया था।
- व्यापार के मोर्चे पर भी हालात कुछ ऐसे ही हैं। वर्ष 2016-17 में भारत ने चीन से करीब 61 अरब डॉलर का आयात किया था जबकि भारत ने चीन को केवल 10 अरब डॉलर का निर्यात किया।
- इस भारी असमानता के चलते भारत के कुल व्यापार घाटे में भारत-चीन व्यापार की हिस्सेदारी आधे से भी अधिक हो चुकी है लेकिन अगर चीन के नजरिये से देखें तो यह आंकड़ा बहुत बड़ा नहीं लगता है।
- चीन का कुल वार्षिक निर्यात करीब 22 खरब डॉलर है। इस तरह भारत को 61 अरब डॉलर का निर्यात करना चीन के कुल निर्यात के लिहाज से एक छोटा हिस्सा ही है।
- इसी तरह भारत से आयात के मामले में भी चीन पर ज्यादा असर नहीं पडऩे वाला है क्योंकि उसके कुल आयात में भारत से होने वाले आयात का हिस्सा काफी कम है।
- भारत के नजरिये से देखने पर चीन से भारत को होने वाला आयात या भारत में उसका निवेश बड़ा दिख सकता है लेकिन चीन के दृष्टिकोण से देखें तो भारत के साथ उसके व्यापारिक रिश्ते या भारत में उसका निवेश अभी इतने बड़े पैमाने पर नहीं पहुंचा है कि उसका नेतृत्व सीमा विवाद पर इस पहलू के असर को लेकर अधिक चिंतित हो। भारत भले ही आकार के लिहाज से चीन के लिए बहुत बड़ा बाजार हो सकता है लेकिन इस संभावना का क्रियान्वित हो पाना अभी बाकी है।

हालांकि भारत में सोशल मीडिया पर चीनी उत्पादों के बहिष्कार संबंधी अभियान भारतीय नागरिकों के खरीदारी संबंधी फैसलों पर असर डाल सकता है जिससे चीनी उत्पादों का भारत को होने वाला निर्यात भी प्रभावित हो सकता है। सच तो यह है कि भारत में चीन का निवेश और चीनी आयात लगातार दो साल तेज रहने के बाद पिछले वित्त वर्ष में गिरावट पर रहा था। लेकिन चीन के साथ भारत के कारोबारी रिश्ते का आकार इतना छोटा है कि हमारे पड़ोसी देश पर इससे असुविधाजनक हालात में पडऩे की बात तो छोड़ ही दीजिए, वह इस बारे में अधिक चिंता भी नहीं करेगा।

भारत और नेपाल

With global geopolitics on the boil, and the Hindi-Chini relationship in free fall, it should be in India's interest to secure its own neighborhood,

#Jansatta

भारत और नेपाल के रिश्तों में कुछ समय से खटास की स्थिति थी। लेकिन दोनों देशों के संबंधों के अतीत के मद्देनजर और वर्तमान के महत्त्व को देखते हुए बिगड़ते हालात को सुधारने की कोशिशें हुईं, और अब दोनों देशों के संबंध फिर पटरी पर आते दिख रहे हैं।

Tension in front of INDIA

• भारत के लिए फिलहाल सबसे बड़ी चिंता यही है कि जिन पड़ोसी देशों के साथ संबंध सहज नहीं हैं, वे कहीं भारत-विरोधी गतिविधियों के अड्डे न बन जाएं। पाकिस्तान इसका सबसे बड़ा उदाहरण है।

• थोड़े समय पहले नेपाल को लेकर भी इस तरह की आशंकाएं पैदा हुई थीं।

Recent visit of Nepal PM

भारत के दौरे पर आए नेपाल के प्रधानमंत्री शेर बहादुर देउबा ने गुरुवार को भरोसा दिलाया कि नेपाल कभी भी अपनी धरती से भारत-विरोधी गतिविधियां नहीं चलने देगा। इसके अलावा, दोनों देशों के प्रधानमंत्रियों के बीच शिखर वार्ता के बाद सुरक्षा मुद्दों, सड़क निर्माण और मादक पदार्थों की तस्करी

नियंत्रित करने सहित आठ समझौतों पर हस्ताक्षर हुए। गौरतलब है कि भारत और नेपाल अपने राजनयिक संबंधों की सत्तरवीं वर्षगांठ मना रहे हैं।

China & Nepal

- कुछ समय से नेपाल में चीन जिस तरह की दिलचस्पी दिखा रहा है, उसे देखते हुए इस शिखर वार्ता में रणनीति के स्तर पर द्विपक्षीय और क्षेत्रीय मुद्दों पर विस्तृत बातचीत की अहमियत समझी जा सकती है।
- करीब साल भर पहले यह खबर आई थी कि नेपाल को भारत की ओर से की जाने वाली मदद घट कर आधी रह गई है, जबकि चीन ने अपनी ओर से नेपाल को सहायता के मद में जारी राशि को दोगुना कर दिया था।

Winning confidence of Nepal

- लेकिन भारत और चीन के बीच जिस तरह की तनातनी चल रही है, उसमें नेपाल पर चीन के प्रभाव को बढ़ने देना एक रणनीतिक भूल होती। इसलिए नेपाल का भरोसा पहले जैसा बहाल करना भारत के लिए जरूरी था।
- यों नेपाल में अप्रैल 2015 में भयावह भूकम्प के बाद पुनर्निर्माण कार्यों के लिए भारत ने एक अरब डॉलर की राशि देने की घोषणा की थी। अब देउबा के इस दौरे में नेपाल में पचास हजार घरों के पुनर्निर्माण में मदद के लिए आवास अनुदान, शिक्षा, सांस्कृतिक विरासत और स्वास्थ्य क्षेत्र में कई समझौते हुए।

भारत और नेपाल के बीच जैसे संबंध रहे हैं उसकी तुलना दूसरे देशों से नहीं की जा सकती। दोनों देशों की आपसी सीमा खुली हुई है और दोनों तरफ के लोगों के बीच संपर्क और संबंध का सहज तानाबाना मौजूद है। भारत ने नेपाल के लोगों को अपने यहां पढ़ाई-लिखाई करने, रहने और काम करने की सुविधा दे रखी है। नेपाल की अर्थव्यवस्था कई मायनों में भारत पर निर्भर है। यही वजह है कि जब दोनों देशों के बीच संबंधों में खटास आती है तो उसका सीधा असर बहुत-से लोगों की रोजमर्रा की जिंदगी पर भी पड़ता है। यह संतोष की बात है कि ताजा शिखर वार्ता के बाद संबंधों के फिर से सामान्य हो जाने का भरोसा जगा है

दुनिया की खामोशी से शर्मसार मानवता : Rohingya Issue

संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार आयोग ने म्यांमार से कहा है कि वह सेना को रोहिंग्या समुदाय का दमन करने से रोके। लेकिन सरकार की सहमति से हो रहे ये जुल्म लगातार बढ़ते जा रहे हैं।

- अगस्त मध्य में फौज ने फिर हिंसक कार्रवाई की, जिसमें अनेक रोहिंग्यायियों के मारे जाने की खबर है।
- सदियों से रहते आने के बावजूद उनको बेगाना घोषित कर दिया गया है।
- इस बेघर-बेमुल्क समुदाय की न अपनी पहचान बची है, न जमीन।
- न उन्हें नागरिकता मिली हुई है। उनके स्वतंत्र आवागमन, शिक्षा, सामाजिक सुरक्षा जैसे बुनियादी हक भी उनसे छीन लिए गए हैं। वोट देने का अधिकार भी उनको नहीं है।
- दो करोड़ की आबादी वाला यह समुदाय दुनियाभर में फैला हुआ है। ये लोग धर्म के लिहाज से मुस्लिम हैं। उन पर अत्याचार में स्थानीय सेना के साथ ही बहुसंख्यक बौद्ध आबादी भी शामिल है।
- वे भाग कर पड़ोसी देशों में जाते हैं तो उन्हें वहां से खदेड़ दिया जाता है। इस मुद्दे पर भारत की भूमिका बहुत अहम रही है।

Who are Rohingyas:

रोहिंग्या म्यांमार के उत्तरी प्रांत अराकान क्षेत्र (अब रखाइन) के मूल निवासी माने जाते हैं। सरकार क्योंकि उनका देश निकाला करने पर तुली हुई है, इसलिए वे जान बचाने और चैन की तलाश में आसपास के देशों-भारत, बांग्लादेश, इंडोनेशिया, मलेशिया, थाईलैंड आदि में पलायन करते हैं।

UN & Rohingyas

- संयुक्त राष्ट्र ने हिंसा की नई घटनाओं के बाद म्यांमार से सख्त लहजे में कहा है कि वह रोहिंग्या लोगों पर हो रहे जुल्म रोके।
- अचंभे की बात है कि मानवाधिकारों के लिए जिंदगीभर लड़ती रही नोबेल पुरस्कार प्राप्त आन सान सू ची इन अत्याचारों पर एकदम चुप्पी साधे हुए हैं।
- यह स्थिति अचानक नहीं आई है। 1948 में बर्मा (म्यांमार) आजाद हुआ तो रोहिंग्यायियों को नागरिकता देने से इनकार कर दिया गया और उन्हें उजाड़ने की कोशिशें की जाने लगीं।
- बहुसंख्यकों की इस दादागिरी के विरोध में लगातार आवाज उठाने के बावजूद जुल्म नहीं थमे तो कई बार सशस्त्र बगावत का रास्ता भी अपनाया गया, लेकिन सैन्य शासन बौद्धों की बात मानकर बगावत को हर बार कुचलता रहा।

India & Rohingyas

- भारत में रोहिंग्या शरणार्थियों की संख्या का सही अनुमान नहीं लगाया गया है, लेकिन उनके आने का सिलसिला बना हुआ है।
- गृह राज्य मंत्री ने साफ़ कहा कि अब और शरणार्थियों को भारत में घुसने की छूट नहीं दी जा सकती। मानवाधिकार संगठनों की दलीलों पर तल्ख होते हुए रिजिजू ने कहा कि इस मामले में भारत का रुख किसी भी अन्य देश से कमतर नहीं है।
- मोटे अनुमान के मुताबिक भारत में इस समय लगभग 25 हजार रोहिंग्याई शरण लिए हुए हैं।
- ये लोग जम्मू-कश्मीर, उत्तर प्रदेश, बंगाल, बिहार आदि राज्यों में बेहद डर के साथ वक्त बिता रहे हैं। अनुमान है कि बांग्लादेश में करीब चार लाख रोहिंग्याई रह रहे हैं।
- बांग्लादेश के नेता रोहिंग्यायियों को देश से निकालने पर भी विचार करते रहे हैं। लेकिन एक तो मुस्लिम धर्मानुयायी और दूसरे बांग्लाभाषी होना हर बार किसी कठोर कार्रवाई से रोकता रहा है।

अमेरिका का नरसंहार स्मृति संग्रहालय रोहिंग्यायियों की राज्यविहीन बंगाली मुस्लिमों के रूप में पहचान करता है। रोहिंग्या कभी बर्मा के शासक भी रहे हैं। उनकी आबादी बंगाल की खाड़ी के पूर्वी तटीय क्षेत्र में एक लग्बी पट्टी, जिसे भूगोल अराकान के नाम से पहचानती है, पर बसी हुई है। यह पट्टी उत्तर से दक्षिण में 640 किलोमीटर लम्बी है और उसकी चौड़ाई 145 किलोमीटर है। यह इलाका ज्यादातर पहाड़ी होने से खेती के लिए मुफीद नहीं है।

म्यांमार में लम्बे समय तक सैन्य शासन रहा है और वहां अब जो सरकार है, वह भी मानवीय मूल्यों और अपने ही नागरिकों के प्रति कर्तव्य से आंखें मूंदे हुए है। जुल्म और शोषण के खिलाफ इनसानियत की नींद कब टूटेगी, यह बड़ा सवाल आज सबके सामने है।

रोहिंग्या मुसलमानों पर भारत का यूएन को कड़ा जवाब, कहा – Question of National Security

Rohingyas question relates to national security of India and our ethics lies in protecting our National interest

- देश में बसे रोहिंग्या शरणार्थियों पर सरकार के रुख, गोरक्षकों द्वारा किए जा रहे हमले और गौरी लंकेश की हत्या पर संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार आयोग (यूएनएचआरसी) की निंदा का भारत ने कड़ा विरोध किया है.
- संयुक्त राष्ट्र में भारत के स्थायी प्रतिनिधि ने कहा, 'हम यूएनएचआरसी के उच्चायुक्त जीद राद अल हुसैन द्वारा इन मसलों पर की गई निंदात्मक टिप्पणियों से आहत हैं.'
- यह भी कहा कि किसी एक घटना के आधार पर ऐसी टिप्पणी करना अच्छी बात नहीं है. उनका कहना था कि दूसरे देशों की ही तरह भारत भी अवैध प्रवासियों को लेकर चिंतित है. उन्होंने बताया कि इनकी संख्या बढ़ने से राष्ट्रीय सुरक्षा खतरे में पड़ सकती है और देश में कानून का पालन कराने का मतलब किसी वंचित समाज के प्रति दया भाव में कमी लाना नहीं है.
- यूएनएचआरसी के उच्चायुक्त जीद राद अल हुसैन ने इस मामले पर कहा था, 'मैं रोहिंग्या मुसलमानों को तब उनके देश म्यांमार भेजने के भारत के निर्णय की कड़ी निंदा करता हूं जब वहां उन पर जुल्म हो रहे हों.' उन्होंने यह भी बताया था कि भारत में 40 हजार रोहिंग्या मुसलमान हैं, जिनमें से 16 हजार ने संयुक्त राष्ट्र से शरणार्थी प्रमाण-पत्र ले लिया है.
- इससे पहले भारत के केंद्रीय गृह मंत्रालय ने देश के सभी राज्यों को अवैध तरीके से रह रहे रोहिंग्या मुस्लिम शरणार्थियों की पहचान करने के लिए दिशानिर्देश जारी किया था. इसमें देश में अवैध तरीके से रह रहे रोहिंग्या मुसलमानों से देश की सुरक्षा को खतरा बताते हुए उन्हें बाहर निकालने को कहा गया है.

म्यांमार (myanmar) संकट से पार पाने की चुनौती

Complexity of Rohingya issue

- रोहिंग्या मुसलमानों का मसला दिन प्रतिदिन पेचीदा होता जा रहा है। इस मसले की जद में भारत भी आ चुका है। रोहिंग्या मुस्लिम शरणार्थियों का मसला जब सुर्खियां नहीं बना था तब प्रधानमंत्री के म्यांमार दौरे ने यह दर्शाया था कि इस पड़ोसी देश को लेकर भारत को अपने रणनीतिक हितों और घरेलू आदर्शों के बीच संतुलन साधने की जद्दोजहद क्यों करनी पड़ती है? यह जद्दोजहद अभी भी करनी पड़ रही है और इसका पता इससे चलता है कि एक ओर नई दिल्ली यह स्पष्ट कर रही कि वह अवैध रूप से आए रोहिंग्या शरणार्थियों को स्वीकार नहीं करेगी वहीं दूसरी ओर वह बांग्लादेश भागकर आए इन शरणार्थियों को राहत सामग्री भेज रही है। इसी के साथ म्यांमार सरकार की सीधी आलोचना से बच रही है। भारतीय प्रधानमंत्री का म्यांमार दौरा ऐसे समय हुआ था जब रोहिंग्या संकट से निपटने को लेकर म्यांमार सरकार और आंग सान सूकी की आलोचना हो रही थी। इस आलोचना के स्वर लगातार तेज होते जा रहे हैं। रोहिंग्या संकट का दायरा काफी बड़ा है और सूकी की साख भी दांव पर लगी है। संयुक्त राष्ट्र के अनुसार म्यांमार के सैन्य बलों द्वारा चलाई जा रही दमनपूर्ण कार्रवाई के चलते लाखों रोहिंग्या बांग्लादेश का रुख कर रहे हैं।
- भले ही सूकी किसी औपचारिक पद पर न हों पर एक तरह से म्यांमार की नेता वही हैं। मौजूदा हालात के लिए उन्होंने 'आतंकियों' को जिम्मेदार ठहराते हुए दखल देने से इन्कार कर दिया। रखाइन प्रांत में शुरू हुए इस संकट के बाद पहली बार उन्होंने कहा कि उनकी सरकार अपनी सबसे बड़ी चुनौती से जूझ रही है। हमसे डेढ़ साल में इस चुनौती का समाधान तलाशने की उम्मीद लगाना बेमानी होगा। रखाइन में कई दशकों से ही ऐसे हालात बने हुए हैं। इसकी जड़ें औपनिवेशिक दौर से जुड़ी हैं। देश में जो लोग मौजूद हैं वे भले ही हमारे नागरिक न हों, पर हमें उनकी देखभाल करने की जरूरत है। इसी के साथ उन्होंने यह रेखांकित किया कि हमारे पास पर्याप्त संसाधन नहीं हैं, फिर भी यह सुनिश्चित करेंगे कि सभी को कानूनी संरक्षण मिले।

  Myanmar's military establishment&why Ang san suu kyi remained silent about crisis

- म्यांमार के सैन्य प्रतिष्ठान पर सूकी का कोई नियंत्रण नहीं है और उनके एवं सैन्य नेतृत्व के बीच अविश्वास की खाई अभी भी बनी हुई है। रोहिंग्या मुसलमानों से निपटने में सैन्य कार्रवाई की निंदा न करके उन्होंने सैन्य जनरलों को एक तरह से राजनीतिक संरक्षण दिया है। प्रधानमंत्री का म्यांमार दौरा बीते पांच वर्षों के दौरान किसी भी भारतीय प्रधानमंत्री की तीसरा म्यांमार दौरा था जिसमें दो तो उन्होंने ही किए हैं। जब इस मसले पर म्यांमार अलग-थलग पड़ता दिखा तो संयुक्त बयान के जरिये भारत ने उसके प्रति यह कहकर समर्थन व्यक्त किया, 'रखाइन में हालिया आतंकी हमलों की भारत कड़ी निंदा करता है, जिनमें म्यांमार सुरक्षा बलों के कई जवानों को जान गंवानी पड़ी है। हम मानते हैं कि आतंक मानवाधिकारों का दमन करता है, लिहाजा आतंकियों का महिमामंडन नहीं किया जाना चाहिए।'

Myanmar and political&strategic concern of India

- म्यांमार अपने अशांत रखाइन प्रांत में जहां रोहिंग्या मुसलमानों के खिलाफ हिंसा थमने का नाम नहीं ले रही हैं, वहां बुनियादी ढांचे और सामाजिक-आर्थिक सहायता के रूप में भारत की मदद लेने पर सहमत है। अपने व्यापक भू-राजनीतिक और सुरक्षा हितों को देखते हुए भारत लगातार म्यांमार को साधने में जुटा है। अपने आसपास चीन के बढ़ते प्रभाव को देखते हुए भारत इस देश में बुनियादी ढांचे और कनेक्टिविटी से जुड़ी परियोजनाओं के दम पर अपनी पैठ बढ़ाना चाहता है। म्यांमार में चीनी प्रभाव की काट तलाशना भारत के लिए मुश्किल होता जा रहा है, क्योंकि चीन हथियारों से लेकर अनाज तक सभी चीजें उसे बेच रहा है और अगर चीन म्यांमार में अपनी नौसैनिक मौजूदगी बढ़ाता है तो भारत के समक्ष हिंद महासागर में चुनौतियां और बढ़ जाएंगी। इसलिए यह कोई हैरानी की बात नहीं कि म्यांमार मोदी सरकार की 'एक्ट ईस्ट नीति' के मूल में है और उसे लेकर तमाम महत्वाकांक्षी परियोजनाओं का तानाबाना बुना जा रहा है।

Myanmar&Need of it for India

- इनमें भारत-म्यांमार-थाईलैंड एशियाई त्रिपक्षीय राजमार्ग, कलादन मल्टी मॉडल प्जेक्ट, ड-रीवर-पोर्ट कार्गो ट्रांसपोर्ट प्जेक्ट के अलावा बिम्सटेक (बहु-स्तरीय तकनीकी एवं आर्थिक सहयोग के लिए बंगाल की खाड़ी के देशों की पहल) जैसी योजनाएं प्रमुख हैं। पूवरेत्तर भारत में अलगाववादियों से निपटने के लिए भी भारत म्यांमार के सुरक्षा बलों के साथ कंधे के कंधा मिलाकर काम कर रहा है। म्यांमार के साथ भारत की 1,600 किलोमीटर सीमा लगती है और अपनी जमीन से नगा विद्रिहयों को खदेड़ने में म्यांमार का रवैया बेहद सहयोगात्मक रहा है। भारत म्यांमार को ऐसे लोकतंत्र के रूप में उभरते हुए देखना चाहेगा जो अपने पड़ोसियों के साथ शांतिपूर्वक रहे। यह इच्छा शायद देर से जाकर पूरी हो, लेकिन अतीत में म्यांमार के साथ भारत के रिश्ते यही बताते हैं कि उसे न छेड़ना ही भारत के हित में रहा है।
- नब्बे के दशक के मध्य तक भारत म्यांमार के सैनिक शासकों का कटु आलोचक हुआ करता था, पर तेजी से वृद्धि करते दक्षिण पूर्वी एशियाई देशों के साथ जुड़ने की हसरत के साथ अपनी एक्ट ईस्ट नीति को सिरे चढ़ाने के लिए भारत ने एक ओर जहां वहां के सैनिक शासकों को लेकर अपने तेवर नरम किए वहीं दूसरी ओर लोकतंत्र के लिए आवाज उठा रही सू की का मुखर समर्थन भी बंद किया। जब भारत ने देखा कि उसके लिए बेहद अहम प्राकृतिक गैस का एक बड़ा स्रोत तो उसके बगल में है और वह लगातार चीनी शिकंजे में कसता जा रहा है तो उसने सैनिक शासकों के साथ दोस्ती गांठना शुरू कर दी। म्यांमार के मामले में भारत के सामने पश्चिमी देशों के रुख पर टिकना मुश्किल था। यहां

उसके समक्ष विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र की भूमिका और अपने सामरिक हितों को लेकर दुविधा बनी हुई थी।

- भारत में म्यांमार के शरणार्थियों की बड़ी तादाद है जो 1998 में वहां हुई फौजी कार्रवाई के चलते यहां आए थे। भारतीय अभिजात्य वर्ग लंबे समय से सू की के नेतृत्व में चल रहे आंदोलन का समर्थक रहा है। 1993 में सू की को भारतीय नागरिक सम्मान से भी नवाजा जा चुका है। हाल के वर्षों में म्यांमार को लेकर भारत के रणनीतिक हित और ज्यादा अहम हो गए हैं, क्योंकि व्यापार, ऊर्जा और रक्षा क्षेत्र में चीन के साथ म्यांमार की गलबहियां कुछ ज्यादा बढ़ी हैं। म्यांमार पर पश्चिमी देशों के प्रतिबंधों का विध करके भारत ने म्यांमार के सत्ता प्रतिष्ठान का भी पुख्ता भरोसा हासिल किया है।

India in no case want to loose Myanmar

- 125 वर्षों के बाद नवंबर 2015 में म्यांमार में पहली बार हुए खुले चुनाव में जब सू की के नेतृत्व वाली नेशनल लीग फॉर डेमोक्रेसी यानी एनएलडी ने बहुमत हासिल किया तो सू ने स्टेट काउंसलर और विदेश मंत्री का पद संभाला। इससे उन्हें म्यांमार के भविष्य को आकार देने के लिए सेना के साथ मिलकर काम करने का मौका मिला और यहीं भारत को अपना कौशल दिखाने की गुंजाइश मिली। रणनीतिक लाभ की यह स्थिति भारत ने बड़ी मेहनत से हासिल की है जिसे वह किसी भी सूरत में गंवाना नहीं चाहेगा।

म्यांमार से मित्रता बढ़ाने का समय

#Dainik Jagaran

चीन में आयोजित ब्रिक्स शिखर वार्ता के अतिरिक्त प्रधानमंत्री की यात्रा का दूसरा पड़ाव है म्यांमार, जिसे भारत के दक्षिण पूर्व एशियाई देशों (आसियान) के प्रवेश द्वार के रूप में भी जाना जाता है। भारत और म्यांमार के मैत्रीपूर्ण संबंध बहुआयामी

प्रधानमंत्री की म्यांमार यात्रा का महत्व इसलिए बढ़ गया है, क्योंकि इस यात्रा के दौरान रोहिंग्या मुसलमानों के उत्पीड़न एवं पलायन के साथ-साथ उनके भारत में प्रवेश करने से उत्पन्न समस्या पर भी चर्चा होने की संभावना है।

India & Maynmar cooperation in area of

- चूंकि भारत और म्यांमार, दोनों देश आतंकवाद और अलगाववाद की समस्या से जूझ रहे है इसलिए आपसी सहयोग के जरिये इनसे निजात पाना दोनों देशों की प्राथमिकता सूची में शामिल है।
- आतंकवाद के विरुद्ध लड़ाई में साझा प्रतिबद्धता के तहत दोनों देशों के बीच घनिष्ठ सहयोग को और भी मजबूत किया जा रहा है। भारत और म्यांमार के सुरक्षाबलों और सीमा सुरक्षा एजेंसियों के बीच बढ़ता सहयोग इसे रेखांकित भी करता है।
- दोनों देशों के बीच 1,600 किलोमीटर से ज्यादा लंबी सीमा है। ऐसे में बेहतर सीमा प्रबंधन के लिए दोनों देशों में सहयोग को और मजबूत करने की जरूरत है।
- नागरिकों की आवाजाही और व्यापार एवं पर्यटन को प्रोत्साहित करने और सहज बनाने के लिए दोनों देश प्रयत्नशील हैं।
- सीमा पर आव्रजन सुविधाओं की स्थापना इसी दिशा में उठाया गया कदम है। भारत म्यांमार के रक्षा और सशस्त्र बलों के आधुनिकीकरण के लिए प्रतिबद्ध है।

- इसके तहत प्रशिक्षण कार्यक्रम, संयुक्त अभ्यास और रक्षा उपकरणों के क्षेत्र में सहयोग का व्यापक विस्तार शामिल है।
- दोनों देशों की नौसेना के बीच सहयोग में भी तेजी आई है। नौसेना बलों द्वारा संयुक्त समुद्री गश्ती में बढ़ोतरी के साथ म्यांमार को एक पेशेवर और सक्षम नौसेना का निर्माण करने और उसकी समुद्री सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए भारत हरसंभव सहयोग देने को तैयार है।
- इसके अतिरिक्त भारतीय नौसेना, म्यांमार नौसेना को मौसम संबंधी सुविधाओं का निर्माण करने में सहयोग को भी तैयार है।
- प्रधानमंत्री के ब्लू इकॉनमी दृष्टिकोण और म्यांमार के साथ समुद्री सहयोग के विकास पर निकट सहयोग भारत के राष्ट्रीय हित और क्षेत्रीय सुरक्षा के लिए अत्यावश्यक है। इस दिशा में हो रहे प्रयास दोनों देशों के संबंधों को मजबूत करने के साथ समुद्री सीमा को महफूज बनाने में मददगार होंगे।
- वाणिज्य और व्यापार के क्षेत्र में दोनों देशों के बीच असीम संभावनाएं है। बंदरगाह, बिजली, कृषि उद्योग, वन उत्पादों, खनन, निर्माण उद्योग, उपभोक्ता सामान, विनिर्माण और सूचना और संचार प्रौद्योगिकी आदि क्षेत्रों में निवेश के व्यापक अवसर हैं।
- म्यांमार में भारतीय बैंकों की शाखाएं खोलने की अनुमति मिल जाने से आपसी लेन-देन और भुगतान में सहूलियत होगी। सीमावर्ती इलाकों में लोगों के विकास और समृद्धि के लिए दोनों देश बुनियादी ढांचे और कई लघु-आर्थिक परियोजनाओं पर काम कर रहे हैं जिसमें सड़क में सुधार, स्कूलों और स्वास्थ्य केंद्रों की स्थापना, पुलों का निर्माण और कृषि संबंधित प्रशिक्षण गतिविधियां शामिल हैं।
- इसके अलावा भारत यांगून और सित्तवे में अस्पताल, उन्नत कृषि अनुसंधान और शिक्षा केंद्र, राइस बायोपार्क, म्यांमार इंस्टीट्यूट ऑफ इन्फॉर्मेशन टेक्नोलॉजी की स्थापना सहित कई अन्य प्रशिक्षण केंद्रों और कौशल विकास के दिशा में सहयोग कर रहा है। भारत विभिन्न परियोजनाओं के लिए विशेषज्ञता और वित्तीय मदद भी मुहैया करा रहा है।
- अंतरराष्ट्रीय सोलर अलायंस में म्यांमार की भागीदारी के लिए भारत ने पेशकश की है।
- भूकंप, बाढ़, भूस्खलन, चक्रवात, सुनामी सरीखी कई प्राकृतिक आपदाओं से म्यांमार बहुत प्रभावित होता है। इन विपत्तियों से निपटने के लिए आपदा राहत प्रबंधन, सहयोग और प्रशिक्षण में भारत का सहयोग अत्यंत उपयोगी है। प्राकृतिक आपदा के समय भारत की ओर से पड़ोसी राष्ट्रों को त्वरित सहायता से हम सब परिचित हैं। मानवीय सहायता और आपदा राहत के क्षेत्र में सहयोग सुदृढ़ होना लाजिमी है।
- भारत और म्यांमार के बीच ऐतिहासिक और सांस्कृतिक संबंध रहे हैं। सभ्यता और संस्कृति को जोड़ना प्रधानमंत्री मोदी की प्राथमिकताओं में शामिल है। प्रमुख धार्मिक केंद्रों को यातायात के माध्यमों से जोड़ना, धार्मिक तीर्थयात्रा को प्रोत्साहन, प्राचीन स्मारकों, स्तूपों और मंदिरों का जीर्णोद्धार और सांस्कृतिक एवं धार्मिक शिक्षा तथा अनुसंधान इस दिशा में किए जा रहे प्रयास हैं।
- इंडिया-म्यांमार फ्रेंडशिप एसोसिएशन और एमिनेंट पर्सन्स ग्रुप सहयोग की संभावनाओं और प्रयासों को और गति प्रदान करेगा।

भारत-म्यांमार मित्रता में मजबूती से म्यांमार की चीन पर निर्भरता कम होगी और दोनों के बीच निकट सहयोग क्षेत्रीय शांति और विकास को बढ़ावा देगा। प्रधानमंत्री मोदी की म्यांमार यात्रा 'एक्ट ईस्ट' नीति को अमल में लाने का एक और मजबूत कदम और क्षेत्रीय विकास में भारत की भागीदारी और योगदान की विश्वसनीयता का द्योतक है।

ताकतवर जापान भारत के लिए होगा मददगार

Japan can be reliable partner for India and can raise its power

#Business_Standard

रक्षा क्षेत्र में आत्मनिर्भरता हासिल करने में लगे जापान की रक्षा कंपनियों को भारत से सहयोग बढ़ाने पर ध्यान देना होगा।

Recent context

जापान के प्रधानमंत्री शिंजो आबे इस सप्ताह भारत की यात्रा पर आने वाले हैं। उनकी यह यात्रा उत्तर-पूर्व एशिया में मंडराते नाभिकीय खतरे की पृष्ठभूमि में हो रही है।

- हिंद-प्रशांत क्षेत्र में बदलते शक्ति संतुलन के चलते यह इलाका पहले से ही व्यापक और गहरे संकट में फंसा हुआ है।
- उत्तर कोरिया ने हाल के दिनों में परमाणु प्रक्षेपास्त्रों का परीक्षण किया है जिसने जापान के मन में पनपते असुरक्षा भाव को बढ़ा दिया है।
- जापान का मानना है कि चीन हिंद-प्रशांत क्षेत्र में आधिपत्यकारी शक्ति के तौर पर अमेरिका को अपदस्थ करने के लिए चीन पूरा जोर लगा रहा है। राष्ट्रपति शी चिनफिंग के कार्यकाल को देखने से यह संदेह पुख्ता हो जाता है कि चीन का 'शांतिपूर्ण उभार महज एक सुविधाजनक मिथक है। डॉनल्ड ट्रंप के आगमन ने भी उनके पूर्ववर्ती ओबामा प्रशासन के समय उभरी उन आशंकाओं को सही साबित किया है जिनके मुताबिक चीन के खिलाफ संघर्ष छिडऩे की सूरत में अमेरिका को अब पहले की तरह भरोसेमंद साथी नहीं माना जा सकता है।
- जापान के लोगों ने पिछली तीन पीढिय़ों से जिस दुनिया को देखा-समझा है अब वह बदल चुका है। लेकिन इसे स्वीकार करने में कई जापानी असहज महसूस कर रहे हैं।

Current Japanese leadership:

आबे जापान के उन चुनिंदा नेताओं में से एक हैं जो बदलते वैश्विक परिदृश्य को यथार्थ के धरातल पर समझने की कोशिश करते हैं। आबे ने अपनी राजनीतिक पूंजी का इस्तेमाल जापान की विदेश एवं रक्षा नीतियों को नए सिरे से गढऩे में किया है। इसके साथ ही उन्होंने जापान के शांतिवादी संविधान में भी संशोधन कराए हैं।

आबे अब भी जापान के लोकप्रिय नेता हैं लेकिन उनकी ही पार्टी के भीतर कुछ ऐसी आवाज मुखर होने लगी है जो रक्षा और सुरक्षा संबंधी उनकी नीतियों से असहमति जताती हैं। कुछ घोटालों के सामने आने से आबे की राजनीतिक पूंजी प्रभावित होने के बावजूद वह अपने सुरक्षा एजेंडे पर आगे बढऩे के लिए वक्त मांग रहे हैं।

- भले ही वह जापान को अधिक आत्मनिर्भर बनाने के एक नए सफर पर निकल पड़े हैं लेकिन एक सशक्त जापान की जरूरत चीन के प्रभाव-क्षेत्र से बाहर मौजूद हरेक पूर्व एशियाई देश महसूस कर रहा है।
- वियतनाम, ऑस्ट्रेलिया, इंडोनेशिया और सिंगापुर सभी चीन के प्रभुत्व के खिलाफ आवाज उठाने की मंशा रखते हैं लेकिन वास्तव में चीन के खिलाफ खड़े होने से जुड़े जोखिम इतने अधिक हैं कि कोई भी ऐसा करने से परहेज करेगा।
- डोकलाम विवाद में भारत ने यह साबित कर दिया है कि वह चीन की जबरदस्ती का मुकाबला करने में सक्षम है। लेकिन अगर भारतीय सीमा के बजाय दक्षिण चीन सागर में चीन ऐसा ही दुस्साहस करता है तब शायद भारत वैसी जिद नहीं दिखाएगा।
- ऐसी स्थिति में जापान ही पूर्व एशिया का ऐसा अकेला देश बचता है जो चीन के प्रभुत्व के खिलाफ एक क्षेत्रीय शक्ति संतुलन कायम करने की चाहत और क्षमता दोनों रखता है। जापानी नेतृत्व उसके सहयोगियों में भी चीन के खिलाफ खड़े होने की कूवत भर देगा।
- अक्सर यह कहा जाता है कि युद्ध से जुड़ी पुरानी स्मृतियां जापानी नेतृत्व के प्रति पूर्व एशियाई देशों के मन में संदेह के बीज डाल सकती हैं। ऐसी दलीलें चीन के हितों के अनुकूल हैं लेकिन यह भी सच है कि विश्व-युद्ध के बाद जापान की तरफ से पूर्व एशियाई देशों को दी गई मदद और निवेश ने उनके आर्थिक

विकास में भी खासा योगदान दिया है। वैसे भी भविष्य पर नजर रखने वाली कोई भी सरकार इस बात को लेकर अधिक फिक्रमंद होगी कि मौजूदा दौर में चीन क्या कर रहा है, न कि 1945 से पहले जापान ने उनके साथ क्या किया था? आज के समय में आसियान के बहुत कम देश ही सशक्त जापान का विरोध करेंगे। उनमें से अधिकांश देश तो इसका स्वागत ही करेंगे।

JAPAN & INDIA Defence Cooperation

भारत भी ऐसा ही करेगा। समुद्री नक्शे पर नजर डालने से यह साफ हो जाता है कि अगर जापान पश्चिमी प्रशांत महासागर में भारत की आंशिक मदद से चीन को साध लेता है तो वह भारत के ही हित में होगा। इससे भारतीय नौसेना जापान की थोड़ी मदद से हिंद महासागर में अपना ध्यान केंद्रित कर पाएगी। इस तरह जापान अपने संविधान और भारत अपनी क्षमता के दायरे में रहते हुए काम कर सकेंगे। भारतीय नौसेना के विस्तार की योजना चमकदार ढंग से आगे बढ़ रही है। भारत में रक्षा खरीद के व्यापक परिदृश्य को देखते हुए इसे उत्साहजनक ही माना जाना चाहिए। चीनी नौसेना की ताकत में हाल में हुई भारी बढ़ोतरी के लिहाज से देखें तो भारतीय नौसेना की ताकत को नए सिरे से आंकने की जरूरत पड़ेगी। सैन्य शक्ति के बारे में आबे के बनाए नए नियमों का परिणाम यह हुआ है कि अब जापान विशाल जहाज, पनडुब्बी, विमान और सूचना प्रणाली मुहैया कराने की क्षमता से लैस हो चुका है। जापानी सैन्य शक्ति भारतीय नौसेना की ताकत बढ़ाने में मददगार हो सकती है।

इस दिशा में की गई पहली कोशिश तो खैर नाकाम हो गई थी।

- भारत आकाश और पानी दोनों पर उड़ान भरने में सक्षम विमान शिन्मायवा यूएस-2 को जापान से खरीदना चाहता था लेकिन वह प्रस्ताव आगे नहीं बढ़ सका। हालांकि अगर दोनों देशों की सरकारें उस प्रकरण से कुछ सीख लेती हैं तो उसे नाकाम नहीं कहा जाएगा। दरअसल जापान की कंपनियां दुनिया भर में अपना परचम लहरा रही हैं लेकिन रक्षा उपकरण कारोबार के मामले में अभी वे नौसिखिया ही हैं।
- जापान की नौकरशाही का रूढ़िवादी अंदाज रक्षा निर्यात कारोबार को और भी जटिल बना देता है। आबे की नीतियों के मुताबिक खुद को ढाल पाने में व्यवस्था के नाकाम रहने से रक्षा उपकरण कारोबार में जापान को अभी तक असफलता ही मिली है। ब्रिटेन और इंडोनेशिया को समुद्री निगरानी विमान बेचने, ऑस्ट्रेलिया को पनडुब्बी देने और भारत को शिन्मायवा विमान बेचने की नाकाम कोशिशें इसके चंद उदाहरण हैं।

जहां तक भारतीय परिप्रेक्ष्य का सवाल है तो हमें जापान के साथ सामरिक रक्षा भागीदारी को बढ़ाने के लिए शिन्मायवा प्रकरण से आगे देखना होगा। प्रधानमंत्री मोदी और आबे तो ऐसी ही मंशा जताते रहे हैं। भारत चाहता है कि उसे जापान से अच्छी कीमतों में सौदा हो और स्थानीय स्तर पर उत्पादन का अधिकार भी मिले। भारत की ये मांगें वाजिब लगती हैं लेकिन कहीं-न-कहीं जापान के साथ एक दीर्घकालिक और दोस्ताना रक्षा भागीदारी कायम करने की बड़ी तस्वीर को हम नजरअंदाज कर देते हैं।

दोनों देशों के प्रधानमंत्रियों को अपनी मुलाकात के दौरान रक्षा सहयोग बढ़ाने के लिए एक साझा कार्यबल गठित करने का फैसला लेना चाहिए। इस दिशा में तात्कालिक सहयोग का एक मौका भी मौजूद है। भारत अपनी नौसेना के लिए नई पनडुब्बियां खरीदना चाहता है और जापान की सोरयू श्रेणी की पनडुब्बियां काफी अच्छी मानी जाती हैं। कई मायनों में यह सौदा काफी अहम हो सकता है। इन सभी संभावनाओं को कार्यरूप देने के लिए जापान को आबे का अनुसरण करना होगा। जापान को अब एक बड़ी शक्ति के तौर पर बरताव करना चाहिए। चीन और उत्तर कोरिया की संहारक क्षमता बढ़ने के बाद

अब अमेरिका पहले की तरह जापान की मदद में संकोच करेगा। ऐसी स्थिति में जापान के सशक्त होने की सबसे ज्यादा जरूरत तो खुद जापान को ही है।

जापान (India Japan Relation) के साथ रिश्तों की नई रफ्तार

#Hindustan

जापान के प्रधानमंत्री शिंजो अबे का भारत दौरा कई मायनों में मील का पत्थर साबित हुआ है। जापान भारत के साथ मजबूत दोस्ती का हिमायती है और इसको लेकर वह संकल्पित भी दिखा। इस यात्रा में दर्जन भर से अधिक करार हुए, जो नागरिक उड्डयन, कारोबार, विज्ञान व प्रौद्योगिकी, कौशल विकास जैसे क्षेत्रों से जुड़े हैं।

What these agreements signify'

ये समझौते बताते हैं कि भारत और जापान के रिश्तों में अब कितनी गरमाहट आ चुकी है, खासतौर से इन्फ्रास्ट्रक्चर के क्षेत्र में आई प्रगति उल्लेखनीय है।
मुंबई और अहमदाबाद के बीच प्रस्तावित बुलेट ट्रेन परियोजना के लिए जापान ने मामूली शर्तों पर 88 हजार करोड़ रुपये का कर्ज देने की बात कही है। इसे चुकाने के लिए 50 साल का वक्त तो दिया ही गया है, ब्याज की दर भी काफी कम यानी 0.1 फीसदी रखी गई है।
इस परियोजना से देश में तकनीकी अपग्रेडेशन का काम भी तेज होगा। यह काम इसलिए भी बहुत जरूरी है, क्योंकि भारतीय रेल फिलहाल तकनीक के मोर्चे पर काफी पीछे है।
शिंजो अबे की यात्रा यह भी बता रही है कि आने वाले दिनों में भारत और जापान के बीच सांस्कृतिक आदान-प्रदान तेज होंगे। यह स्वाभाविक है, क्योंकि जब जापान से आई तकनीकी विशेषज्ञों की टीम यहां रहेगी, तो दूसरी कई कंपनियों के लोग आएंगे और पीपुल-टु-पीपुल कॉन्टेक्ट (आम लोगों के स्तर पर संबंध) विकसित होंगे। इससे दोनों देश सांस्कृतिक रूप से करीब आएंगे ही। इन सबके अलावा प्रधानमंत्री ने देश में अधिक से अधिक जापानी रेस्तरां खुलने की उम्मीद भी जताई है। यह सही है कि भारत में जापानी रेस्टूरेंट मौजूद हैं, लेकिन इनकी संख्या काफी कम है, और जो हैं भी, वे बहुत महंगे हैं। जापान को करीब से जानने वालों को पता होगा कि वहां पर 'बेंटो बॉक्स' कितना लोकप्रिय है। एक पारंपरिक बेंटो बॉक्स में चावल या नूडल्स, मछली या मीट, अचार और सूखी सब्जी होती है। यह वहां के आम जनजीवन का हिस्सा है। उम्मीद है कि जब अपने यहां जापानी रेस्तरां खुलेंगे, तो जिस तरह मैकडोनल्ड को हमने अपनाया, उसी तरह जापानी रेस्तरां का भी हम स्वागत करेंगे।

New era of Investment

इस यात्रा से भारत में जापानी निवेश के नए युग की शुरुआत हो रही है। भले ही पिछले एक साल के भीतर जापानी कंपनियों का निवेश 60-70 फीसदी बढ़ा है, मगर जापानी प्रधानमंत्री के इस दौरे में हुए कई करार सुखद बदलाव के वाहक हैं। खास तौर से इन्फ्रास्ट्रक्चर, नागरिक उड्डयन व विज्ञान-प्रौद्योगिकी के क्षेत्रों में निवेश काफी बढ़ने की उम्मीद है। यह जरूर है कि रक्षा क्षेत्र में कोई ठोस समझौता इस यात्रा में आकार नहीं ले सका, लेकिन दोनों प्रधानमंत्रियों की बातों पर गौर करें, तो लगता यही है कि इस पर सहमति बनाई जा रही है और देर-सवेर यहां से भी, खास तौर से रक्षा उपकरणों को लेकर हमें अच्छी खबर मिलेगी। यदि यह संभव हुआ, तो जापान पहली बार किसी देश के साथ इस तरह का रक्षा करार करेगा।

NE & Japanese Investment

इसी तरह, पूर्वोत्तर भारत के इन्फ्रास्ट्रक्चर को विकसित करने में जापान की रुचि का भी स्वागत किया जाना चाहिए और उस मुक्त व खुले 'Indo Pacific Region की कवायद का भी, जिसके तहत समुद्री क्षेत्रों में एक-

दूसरे की संप्रभुता और अंतरराष्ट्रीय कानूनों के सम्मान की बात कही गई है। यह खासतौर से चीन जैसे देशों के लिए संदेश है, जिसका दक्षिण चीन सागर में कई दूसरे देशों के साथ तनाव बना रहता है। यह बड़ी बात है, और इन पर शिंजो अबे का कहना बिल्कुल उचित है कि ये तमाम करार ग्लोबल भी हैं, सामरिक भी, और 'स्पेशल' तो ये हैं ही।

जापानी प्रधानमंत्री की इस यात्रा पर चीन की खास नजर रही। वहां शंका के कुछ स्वर उठे हैं, पर बीजिंग को समझना चाहिए कि भारत चीन को अलग-थलग करने का पक्षधर नहीं है। प्रधानमंत्री का ब्रिक्स सम्मेलन में शिरकत करना और आतंकवाद के मोर्चे पर चीन को मनाना इसी की तस्दीक करता है। नई दिल्ली जानती है कि समग्रता में विकास तभी संभव है, जब सभी देश एक छतरी के नीचे आएं। अभी आतंकवाद का मसला गरम है और उत्तर कोरिया अपने मिसाइल कार्यक्रम को बढ़ावा देकर वैश्विक शांति को बार-बार चुनौती दे रहा है। ऐसे में, जरूरी यही है कि चीन और भारत भी द्विपक्षीय रिश्तों को एक नई ऊंचाई दें। शिंजो अबे की तरफ दोस्ती का मजबूत हाथ बढ़ाकर प्रधानमंत्री मोदी ने चीन को यही संदेश देने की कोशिश की है।

हां, यह बात और है कि जापानी प्रधानमंत्री की इस यात्रा ने प्रधानमंत्री की छवि को भी एक नया मुकाम दिया है। वह निजी तौर पर ऐसी परियोजनाओं, खासकर बुलेट ट्रेन में रुचि ले रहे थे, और इसका नतीजा भी सुखद आया है। इससे दूसरे तमाम देशों में यह संदेश गया है कि अगर वे भारत को साथ लेकर कुछ करना चाहते हैं, तो प्रधानमंत्री के स्तर पर बात होनी चाहिए, क्योंकि प्रधानमंत्री दोतरफा रिश्तों के हिमायती हैं। इसलिए जरूरी है कि चीन भी अब संवेदनशीलता दिखाए और जिस तरह जापान ने इन्फ्रास्ट्रक्चर के काम में भारत की चिंताओं को समझा है, चीन भी वैसा ही रुख दिखाए। 'वन बेल्ट-वन रोड इनिशिएटिव' के तहत इन्फ्रास्ट्रक्चर के जो प्रोजेक्ट चल रहे हैं, उनसे जुड़ी भारत की चिंताएं उसे समझनी होंगी।

उल्लेखनीय यह भी है कि भारत-जापान-ऑस्ट्रेलिया और भारत-जापान-अमेरिका के बीच त्रिपक्षीय फोरम पहले से मौजूद हैं। अब इनको एक करके संयुक्त फोरम बनाने की बात चल रही है। यह सलाह ऑस्ट्रेलिया की तरफ से आई थी। अगर ऐसा हुआ, तो इससे भी भारत और जापान का द्विपक्षीय रिश्ता परवान चढ़ेगा। भारत हमेशा से सकारात्मक रिश्तों का हिमायती रहा है, इसलिए उम्मीद है कि जिन मसलों पर जापानी प्रधानमंत्री से इस बार बात नहीं हो पाई, उन पर जल्दी ही सहमति बन सकेगी।

अफगानिस्तान मुद्दे पर अमेरिका से अलग भारत को बनानी होगी रणनीति

America has announce new south asia policy and policy hints larger role for India. However what should be India's position this article describe that position which is win win for India.

हाल ही में अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने नई अफगानिस्तान नीति की घोषणा की है। अफगानिस्तान में भारतीय भूमिका को लेकर भी अमेरिका की नई नीति में बदलाव किए गए हैं। सवाल है कि क्या वास्तव में अमेरिका की नई अफगानिस्तान नीति पूर्व से अलग है या फिर यह एक ऐसी नीति है जिसका कोई निश्चित उद्देश्य नहीं। क्या इस नई नीति से भारत को कोई राजनीतिक, आर्थिक या सामरिक फायदा हो सकता है? 16 वर्षो तक बड़े पैमाने पर सैनिकों की उपस्थिति और इतना खून-खराबे के बावजूद यदि आज भी अफगानिस्तान में आतंकवाद पनप रहा है तो यह अमेरिकी नीति की असफलता की बानगी है। बहरहाल, अमेरिका की नई अफगानिस्तान नीति में मुख्यत: दो-तीन बदलाव देखे जा सकते हैं।

¬ पहला, अमेरिका अफगानिस्तान में राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया यानी विकास कार्यो से अपने आप को अलग कर रहा है। अब अमेरिका का अफगानिस्तान में रहने का मुख्य मकसद आतंकवादियों पर कार्रवाई करना मात्र है, लेकिन क्या विकास की प्रक्रिया को पूरा किए बिना अमेरिका अफगानिस्तान में आतंकवाद मिटाने में कामयाब हो पाएगा? राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक कारणों को हल किए बिना मात्र सैनिक कार्रवाइयों से आतंकावाद का सामना करना लगभग नामुमकिन है। विकास को बिना रफ्तार दिए आतंकी गतिविधि पर काबू पाना अफगानिस्तान के लिए कठिन काम है।

दूसरा, अमेरिका ने अफगानिस्तान से अपने सैनिकों की वापसी की कोई समय सीमा नहीं बताई है। बतादें कि इसके पूर्व में बराक ओबामा प्रशासन ने अफगानिस्तान से अमेरिकी सैनिक बुलाने की एक समय सीमा तय की थी। तीसरे बदलाव के रूप में अमेरिका द्वारा भारत की अफगानिस्तान में भूमिका बढ़ाने और पाकिस्तान को आतंकवादी गतिविधि के लिए सीधे तौर पर जिम्मेदार बताना है। यह एक महत्वपूर्ण बदलाव है। नई दिल्ली और काबुल हमेशा विश्व बिरादरी से यह बताते रहे हैं कि अफगानिस्तान और भारत में आतंकवादी गतिविधि के लिए पाकिस्तान सीधे तौर पर जिम्मेदार है। मगर इससे पहले अमेरिका ने सीधे तौर पर कभी भी पाकिस्तान पर सवाल नहीं खड़े किए। इस लिहाज से यह न सिर्फ भारत और अफगानिस्तान के लिए बल्कि पूरे दक्षिण एशिया के लिए कूटनीतिक जीत है। यानी अमेरिका अफगानिस्तान में भारत की भूमिका को विस्तार देने को इच्छुक है, लेकिन सवाल है कि क्या भारत को भी मात्र अमेरिका की इच्छा के अनुरूप अपनी अफगान नीति में बदलाव करना चाहिए या अपने राष्ट्रीय हितों के मद्देनजर एक स्वतंत्र नीति बनाने की आवश्यकता है। पिछले 16 वर्षो के दौरान अफगानिस्तानी आवाम के बीच अमेरिका की छवि एक अक्रांत शक्ति की बनी है, जो आतंकवाद के नाम पर बच्चे और मासूमों का ड्रोन से शिकार करता है। यही कारण है कि इन वर्षो में अफगानिस्तान में अमेरिकी सैनिकों पर कई हमले हुए हैं। इस प्रतिरोध को मात्र तालिबान तक सीमित करके नहीं देखा जा सकता।

Future course of India Afghanistan Relation

ऐसे हालात में यह जरूरी है कि भारत-अफगानिस्तान संबंध का आधार द्विपक्षीय हो। क्योंकि अमेरिकी नीति पर आधारित भारत की सकारात्मक प्रयास को भी अफगानिस्तान में संदेह की निगाह से देखा जा सकता है। 2001 के बाद भारत और अफगानिस्तान के संबंधों में काफी मजबूती आई है। गौरतलब है कि आंतरिक मामले में बिना कोई हस्तक्षेप किए भारत ने आर्थिक मोर्चे पर अफगानिस्तान की हर संभव मदद की है। इसकी अफगानिस्तान की अवाम आज भी सराहना करती है। अफगानिस्तान को मानवीय सहायता प्रदान करते हुए भारत ने अस्पताल और अफगानी संसद के ढांचे के निर्माण समेत कई कार्य किए हैं। अंतरराष्ट्रीय मामलों के विशेषज्ञ बताते हैं कि अमेरिका की नई अफगान नीति मात्र एक डिले टैक्टिस यानी मामले को लंबा खींचने का प्रयास है ताकि उसकी असफलता पर आलोचना के स्वर को कम किया जा सके।

कुछ विशेषज्ञों का मानना है कि अमेरिका के अफगानिस्तान छोड़ने की स्थिति में क्षेत्रीय शक्तियां मसलन ईरान, चीन, रूस और पाकिस्तान जैसे देश काबुल को भू-राजनीतिक और भू-आर्थिक लड़ाई का अखाड़ा बना सकते हैं। ऐसे में अफगानिस्तान एक और नए संकट की चपेट में आ सकता है। मगर इन सब कयासों के बावजूद देर-सवेर ही सही, लेकिन राजनीतिक और आर्थिक कारणों से अमेरिका को अफगानिस्तान से अपने पांव खींचने ही होंगे।

भारत को इस परिस्थिति के लिए अभी से तैयार रहने की जरूरत है। भौगोलिक कारणों से हम अफगानिस्तान के साथ जमीनी संपर्क स्थापित नहीं कर सकते। पाकिस्तान हमेशा अफगानिस्तान पहुंचने के लिए अपने मार्ग का उपयोग करने को लेकर भारत को मना करता रहा है। बिना जमीनी संपर्क के न तो हम काबुल के साथ आर्थिक संबंध मजबूत करने की स्थिति में हैं और न ही मध्य एशिया में अपनी उपस्थिति दर्ज करा सकते हैं, जहां खनिज पदार्थो का प्रचुर भंडार है। ऐसे में भारत ने ईरान के सहयोग से चाबहार पोर्ट के जरिये अफगानिस्तान से जमीनी संपर्क साधने का सराहनीय प्रयास किया है। भारत को ईरान से सहयोग हासिल करने के न सिर्फ सामरिक और आर्थिक फायदे मिलेंगे बल्कि इसके जातीय राजनीतिक आयाम भी हैं। ईरान एक शिया मुस्लिम देश है और अफगानिस्तान के एक बड़े जातीय समूह हजारा के साथ तेहरान के सांस्कृतिक रिश्ते हैं। ईरान के साथ अपने रिश्तों को प्रगाढ़ बनाकर भारत इस संबंध का बेहतर उपयोग अफगानिस्तान में अपनी साख बढ़ाने में कर सकता है। कुल मिलाकर भारत को एक दीर्घकालिक अफगान नीति तैयार करने की दरकार है। इसके तहत भारत को किसी भी शक्ति मसलन पाकिस्तान, अमेरिका या चीन की नकल करने की जरूरत नहीं। हमें याद रखना होगा कि भारत और अफगानिस्तान के रिश्ते ऐतिहासिक रहे हैं। इस पहलू को ध्यान में रखते हुए भारत को पावर प्रतिस्पर्धा के बजाय अफगानिस्तान के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध स्थापित करने की दरकार है।

5. अमेरिका की दक्षिण एशिया नीति में भारत का स्थान बेहद अहम : पेंटागन

दक्षिण एशिया की नीति के संबंध में अमेरिका ने भारत को अहम साथी बताया है.

¬ पेंटागन ने कहा है कि भारत-अमेरिका के संबंध बहुआयामी हैं.

¬ वॉशिंगटन को नई दिल्ली से अनेक मोर्चों पर मदद मिली है.

¬ पेंटागन ने कहा है कि अमेरिकी नीतियों को सफल बनाने के लिए भी भारत की तरफ से पूरा सहयोग मिल रहा है.

¬ अफगानिस्तान के विकास के लिए अमेरिका के साथ भारत ने भी बड़े स्तर पर आर्थिक मदद दी है.

¬ पेंटागन के मुताबिक भारत और अमेरिका अपने सहयोगियों के साथ साझा संबंधों को मजबूत करते हुए आगे बढ़ना चाहते हैं.

अफगानिस्तान में शांति और सुरक्षा के लिए भारत के प्रयासों की ट्रंप प्रशासन पहले भी सराहना कर चुका है. अफगानिस्तान के विकास के लिए भारत ने वहां बड़े पैमाने पर निवेश किया है. वहां के सुरक्षा बलों को समय-समय पर भारतीय सैन्य विभाग प्रशिक्षण देता है. साथ ही रक्षा के लिहाज से साल 2016 में भारत ने अफगानिस्तान को चार एमआई-35 विमान भी भेंट किए थे. इन सब बातों को देखते हुए पिछले साल अमेरिका ने भारत को अपना भरोसमंद साथी कहा था

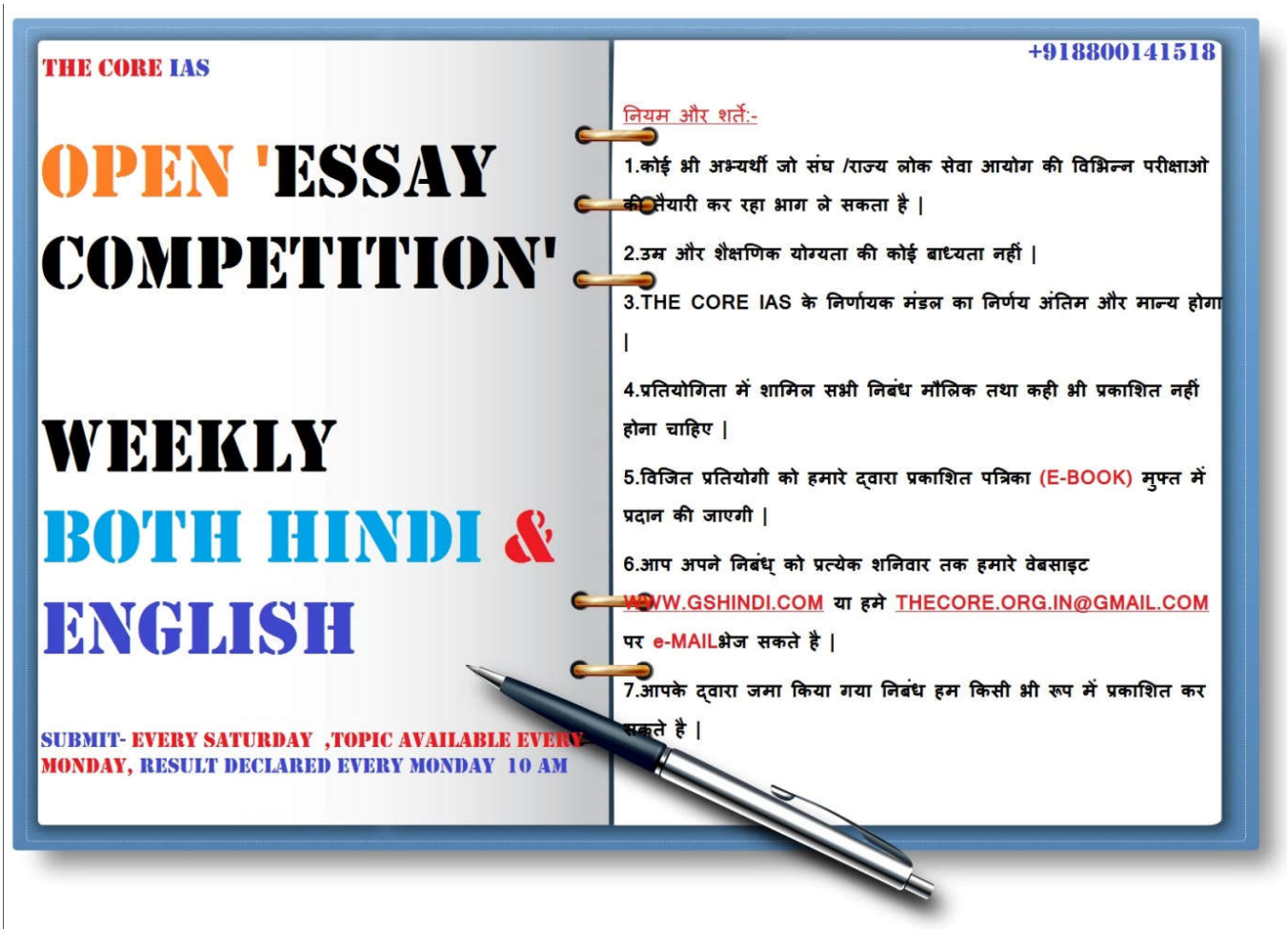

भारत को देखने के अमेरिकी नज़रिये में बदलाव

भारतीय आईटी इंजीनियरों के लिए एच-1-बी वीज़ा की संख्या को अत्यंत सीमित करने के राष्ट्रपति ट्रम्प के फैसले से भारत में समस्याएं व चिंताएं पैदा हुई हैं|

What Prime minister of India did to resolve this issue while in US:

- उस मुद्दे को ट्रम्प प्रशासन के सामने मसला उठाने की बजाए मोदी ने फैसला किया कि इसके लिए वे अमेरिका के इंडस्ट्री व बिज़नेस का इस्तेमाल करेंगे कि वे इससे संबंधित कानून में संशोधन करवाएं।
- उन्होंने पूरा दिन 20 शीर्ष अमेरिकी बिज़नेसमैन और हाई टेक इंडस्ट्री के प्रमुखों से मिलने में बिताया, जिनमें से चार तो भारतवंशी थे।
- उन्होंने इन लोगों को सलाह दी कि वे अमेरिकी सीनेटरों व कांग्रेस सदस्यों के बीच यह मसला मजबूती से उठाएं।
- उन्होंने ध्यान दिलाया कि प्रस्तावित कानून का अमेरिका की हाई-टेक कंपनियों पर विपरीत असर पड़ेगा। ‘

Symmetry on some other issues:

अमेरिका पहले' की ट्रम्प की नीतियों पर अपना दृष्टिकोण रखते हुए यह साफ कर दिया गया कि भारत अपनी निजी हवाई सेवाओं के कारण अमेरिकी विमानों का महत्वपूर्ण बाजार है- इस बिंदु को खुद ट्रम्प ने स्वीकार किया। दोनों पक्षों ने माना कि परम्परागत, सौर और परमाणु ऊर्जा के क्षेत्र में सहयोग के लिए व्यापक संभावनाए हैं। यह भी कहा कि भारत बड़ी मात्रा में प्राकृतिक गैस आयात करने को राजी है। मोदी ने जब ट्रम्प की बेटी इवांका को नई दिल्ली में होने वाले ग्लोबल आंत्रप्रेन्योरशिप समिट के लिए अमेरिकी प्रतिनिधिमंडल का नेतृत्व करने का निमंत्रण दिया तो अमेरिकी राष्ट्रपति खासतौर पर खुश हुए।

Talk on terrorism:

ट्रम्प की चिंतां पर ध्यान देने की तैयारी दिखाने के बदले में उन्होंने भी कुछ दूरगामी निर्णय लिए। उन्होंने दो टूक शब्दों में कहा कि वे 'कट्टर इस्लामी आतंकवाद' को नष्ट करने के लिए प्रतिबद्ध हैं। अब तक अमेरिका लश्कर और जैश जैसे पाक आतंकी गुटों के खिलाफ कार्रवाई के लिए राजी था। लेकिन, पहली बार अमेरिका ने न सिर्फ पाकिस्तान को बल्कि कश्मीर के इस्लामी कट्टरपंथियों को भी साफ संदेश दिया है कि यदि उन्होंने कश्मीर में हिंसा के लिए आईएसआई अथवा लश्कर जैसे गुटों की मदद ली तो उन्हें भी निशाना बनाया जाएगा। व्हाइट हाउस में बातचीत शुरू होने के पहले अमेरिका ने कश्मीरी आतंकी गुट हिजबुल मुजाहिदीन पर पाबंदी लगाते हुए आईएसआई समर्थित इसके सरगना सैयद सलाहुद्दीन पर प्रतिबंध लगा दिए। अमेरिका ने भारत की इस मांग में सुर मिलाया कि पाकिस्तान मुंबई हमले और पठानकोट वायु सैनिक ठिकाने पर हमले के दोेषियों पर कड़ी कार्रवाई करे।

Importance to geopolitical role of India in Indian ocean:

यह तो साफ है कि ट्रम्प प्रशासन न सिर्फ पाकिस्तान के संबंध में सहयोग करने को राजी है बल्कि एशिया और हिंद महासागर क्षेत्र में भारत की भूमिका के महत्व को मान्यता देता है। ट्रम्प ने खुद हिंद महासागर में भारत, जापान व अमेरिकी युद्धपोत के साथ होने वाले नौसैन्य अभ्यास के महत्व पर जोर दिया। बहरीन स्थित अमेरिका का पांचवां बेड़ा अरब देशों से दुनिया को होने वाली कच्चे तेल की सप्लाई पर निगाह रखता है, जहां 60 लाख भारतीय रहते हैं। इस क्षेत्र को मोदी बहुत महत्व देते हैं। यह हमारे पश्चिम में पूर्वी अफ्रीका के किनारों से पूर्व में मलक्का की खाड़ी तक फैला हुआ है। इसी क्षेत्र में ऐतिहासिक रूप से भारतीय सदियों से व्यापार करते रहे हैं।

Talk over Taliban:

सामने मौजूद चुनौतियों के संबंध में दोनों नेता सहमत हुए कि दोनों मिलकर अफगानिस्तान में पाकिस्तान समर्थित आतंकी गुट तालिबान द्वारा उत्पन्न चुनौतियों का सामना कर उन्हें मिटा डालेंगे। इस संदर्भ में पाकिस्तान में तालिबानी ठिकानों पर लगातार जारी ड्रोन हमलों को देखा जा सकता है। ट्रम्प ने अफगानिस्तान में बुनियादी ढांचे के विकास व अन्य सुविधाओं के लिए भारतीय मदद की सराहना की और इसे जारी रखने का आह्वान किया। अमेरिका से रिश्तों में सुधार से संयुक्त अरब अमीरात, सऊदी अरब और कुवैत जैसे देशों से हारे रिश्ते मजबूत होने में मदद मिलेगी। ट्रम्प हिंद महासागर में सतत निगरानी के लिए भारत को अत्याधुनिक ड्रोन देने पर राजी हुए हैं, जहां चीन अपनी मौजूदगी बढ़ा रहा है। अमेरिका को बहरीन में अमेरिकी नौसैनिक उपस्थिति का इस्तेमाल करना होगा ताकि चीन की चुनौती के परिप्रेक्ष्य में जापान, सिंगापुर और वियतनाम को साथ लेकर हिंद महासागर में हमारे समुद्री मार्गों को सुरक्षित रखा जा सके।

डोनाल्ड ट्रंप की नई Afgan Policy

नई योजना Afgapolicy के तहत ट्रंप प्रशासन अब अपने 4000 और सैनिकों को अफगानिस्तान में तैनात करेगा ताकि वे अफगान सुरक्षाबलों को प्रशिक्षित कर सकें

Analyzing the Afgan policy

ट्रंप की यह नई नीति बिलकुल सही मानी जा सकती है क्योंकि अफगानिस्तान से अगर जल्दबाजी में अमेरि की सैनिकों की वापसी होती है तो इससे आतंकवादियों को बिना किसी रोक-
टोक के कार्रवाईकरने का मौका मिल जाएगा. इस दौरान यहां इस्लामिक स्टेट (आईएस) भी अपनी जड़ें मज बूत कर सकता है. ओबामा प्रशासन द्वारा सैनिकों को वापस बुलाने के बाद ठीक ऐसा ही इराक में हुआ थाऔ र उसी के नतीजे में आईएस जैसे घातक संगठन को उभरने का मौका मिला था.

Why Obama policy towards South Asia failed

ओबामा की अफगानिस्तान-पाकिस्तान नीति कई वजहों से कारगर साबित नहीं हो पाई.

- अमेरिका ने सैनिकों की वापसी की समय सीमा पहले ही घोषित कर दी थी. इससे तालिबान को काफी राहत मिली, क्योंकि उसे अब अमेरिकियों की वापसी का ही इंतजार करना था.
- विद्रोह को तब तक नहीं दबाया जा सकता जब तक कि उसकी सुरक्षित पनाहगार नष्ट न कर दी जाए. अ फगानिस्तान के विद्रोही गुटों के लिए यह सुरक्षित पनाहगार पाकिस्तान मुहैया कराता है.अफगानिस्तान के मामले में अमेरिका अब तक पाकिस्तान पर कुछ ज्यादा ही निर्भर रहा है और उसकी अफगान नीति की यह बड़ी कमी थी.

ट्रंप ने पाकिस्तान को चेतावनी दी है. अब पाकिस्तान के लिए सबसे बेहतर होगा कि वह पुराना ढर्रा छोड़े और आतंकवादियों को अपने यहां सुरक्षित ठिकाने मुहैया करवाने से बचे. अगर वह ऐसा नहींकरता तो ट्रंप की नई योजना के तहत कूटनीतिक, आर्थिक और सैन्य तरीकों से उसे इसके लिए मजबूर किया जा सकता है. इस तरह लगातार दबाव बनाकर ही अमेरिका को इस क्षेत्र में कुछ नतीजेहासिल हो सकते हैं. यह भी एक अ च्छी बात हुई है कि ट्रंप ने अफगानिस्तान की स्थिरता और विकास में भारत की भूमिका स्वीकार की है. इसके साथ उन्हें कोशिश करनी चाहिए कि वे ईरान कोउकसाने की कोई कोशिश न करें क्योंकि अफगानिस्तान की स्थिरता में उसकी भी अहम भूमिका रहने वाली है.

यूएस की नई अफगान पॉलिसी (Afgan Policy) से होगा एक नए युग का आरंभ

#Dainik Jagaran

अमेरिकी राष्ट्रपति बनने के बाद डोनाल्ड ट्रंप ने अफगानिस्तान और दक्षिण एशिया पर अपनी सरकार की नीति जारी की। यदि उनका प्रशासन इसे पूर्ण रूप से लागू करने में सफल रहा तो इससे न सिर्फ अफगानिस्तान में स्थायित्व का नया युग आरंभ होगा, बल्कि अमेरिका की पारंपरिक नीति में ऐतिहासिक बदलाव भी दिखेगा। जहां पाकिस्तान पर इस नीति का व्यापक प्रभाव पड़ना तय है वहीं भारत के लिए भी यह गहरे निहितार्थ लिए हुए है।

Analysis of new Afgan Policy

- अफगानिस्तान में शांति के लिए अमेरिका पिछले 15 वर्षों से ज्यादा से युद्धरत है जो उसकी सबसे लंबी लड़ाइयों में से एक है। अमेरिका अफगान सरकार और तालिबान के साथ बातचीत के जरिये भी अफगान समस्या का राजनीतिक समाधान निकालने को प्राथमिकता देता रहा है, लेकिन तालिबान की डोर अभी भी पाकिस्तान के हाथों में है।
- **Pakistan & Terrorism:** वह उसे 20 वर्षों से अधिक समय से खाद-पानी दे रहा है। 2001 में एक हद तक उसकी कमर टूट गई थी तब भी पाकिस्तान ने उसे फलने-फूलने के लिए आश्रय दिया। उसने अमेरिकी रोक के बावजूद तालिबान को समर्थन देना जारी रखा। दुर्भाग्य से इसके बाद भी अमेरिका ने पाकिस्तान के खिलाफ कभी कोई कदम नहीं उठाया। उलटे उसने तालिबान के जरिये पाकिस्तान को न सिर्फ अफगानिस्तान में घुसने दिया, बल्कि वहां भारत की बढ़ती भूमिका को लेकर उसकी कटुतापूर्ण और निराधार बातों पर ध्यान भी दिया।
- पाकिस्तान अफगानिस्तान से भारत के प्रभाव को हमेशा के लिए मिटा देना चाहता है। कुछ वर्ष पूर्व तक पाकिस्तानी चिंताओं में दुबला हुआ जा रहा अमेरिका भी वहां भारत की मौजूदगी का अनिच्छुक था, लेकिन ट्रंप ने तालिबान के प्रति अमेरिकी प्राथमिकताएं बदल दीं। उनके नेतृत्व में अमेरिका अब चाहता है कि अफगानिस्तान में भारत अपनी भूमिका खासकर आर्थिक क्षेत्र में बढ़ाए।

ट्रंप ने राजनीतिक विकल्पों को भी पूरी तरह बंद नहीं किया, लेकिन सीमित जरूर कर दिया है, क्योंकि उन्होंने तालिबान को अब तक आतंकी संगठन घोषित नहीं किया है। जाहिर है कि उनकी पहली प्राथमिकता तालिबान को सैन्य कार्रवाई के जरिये कुचलना है ताकि यदि कभी राजनीतिक समझौते की नौबत आए तो उनका सामना कमजोर तालिबान से हो। इसके लिए अमेरिका को पाकिस्तान में तालिबान के सुरक्षित ठिकानों को नष्ट करना होगा। अमेरिका ने पाकिस्तान को यह सख्त चेतावनी दी तो है कि यदि उसने तालिबान को समर्थन देना बंद नहीं किया तो उसे गंभीर परिणाम भुगतने के लिए तैयार रहना होगा, लेकिन अभी यह तय नहीं कि वह अपने इस रवैये पर कायम रहता है या नहीं, क्योंकि पाकिस्तान को धमकाने के बाद उसके सुर में कुछ नरमी भी आई है।

How Pakista reacted to thuis policy

ट्रंप की नई नीति पर पाकिस्तान की ओर से उम्मीद के अनुरूप कड़ी प्रतिक्रिया आई। पाक प्रधानमंत्री शाहिद खाकन अब्बासी ने राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद की बैठक बुलाई जिसमें उनके कैबिनेट मंत्री सहित सेना प्रमुख और अन्य रक्षा अधिकारी शामिल हुए। बैठक के बाद बयान में आतंकवाद के खिलाफ लड़ाई में पाकिस्तान के योगदान और बलिदान का बढ़ा-चढ़ाकर जिक्र किया गया और अफगान समस्या के लिए स्वयं स्थानीय सरकार को जिम्मेदार बताया। साथ ही पाकिस्तान ने अफगानिस्तान समस्या का राजनीतिक समाधान निकालने की मांग की। उसने दावा भी किया गया कि वह खुद पूर्वी अफगानिस्तान से संचालित पाक विरोधी आतंकी गतिविधियों का भुक्तभोगी है।

- पाकिस्तान को अफगानिस्तान में भारत की भूमिका के विस्तार की बात नागवार गुजरी है। यही वजह है कि उसने अपने बयान में पड़ोसी देशों से अपने खराब रिश्तों के लिए भारत को जिम्मेदार ठहराते हुए कहा कि वह आतंकवाद का पाकिस्तान के खिलाफ कूटनीतिक हथियार के रूप में इस्तेमाल कर रहा है और पूर्व से लेकर पश्चिम तक पाकिस्तान को अस्थिर करना चाह रहा है।
- हमेशा की तरह उसने जम्मू-कश्मीर पर घड़ियाली आंसू बहाते हुए वहां सक्रिय भारत विरोधी तत्वों को समर्थन जारी रखने की प्रतिबद्धता दोहराई। फिर पाकिस्तानी संसद ने ट्रंप के खिलाफ निंदा प्रस्ताव भी पारित किया।

यहां भारत के लिए दो बातें महत्वपूर्ण हैं:

- पहली, भारत ने अफगान सरकार और वहां के लोगों के साथ द्विपक्षीय रिश्ते निभाने के लिए जो स्वतंत्र नीति अपनाई है उसे जारी रखना चाहिए। अफगानिस्तान के अनुरोध पर भारत उसे आर्थिक मदद दे रहा है और सड़क, बांध, बिजली से जुड़ी परियोजनाओं के निर्माण का दायित्व बखूबी निभा रहा है। भारत शिक्षा और स्वास्थ्य क्षेत्र में भी सक्रियता से काम कर रहा है। सुरक्षा क्षेत्र में उसने अफगानिस्तान के सैनिकों को गहन प्रशिक्षण के साथ हथियार भी मुहैया कराए हैं। भारत को अपना यह अभियान जारी रखना चाहिए। अच्छा है कि अमेरिका को अब भारत की अहमियत का अहसास हुआ है।
- भारत अमेरिका को इसके लिए राजी करे कि वह अपनी नई नीति हर हाल में लागू करे ताकि तालिबान की कमर तोड़ी जा सके।

अफगानिस्तान में शांति के लिए पाकिस्तान पर आर्थिक, कूटनीतिक और यहां तक कि सैन्य दबाव भी डाला जाना चाहिए। तालिबान और उसके रहनुमा बने पाकिस्तान को यह अहसास दिलाना जरूरी है कि वह बंदूक के बल पर यह लड़ाई नहीं जीत सकता। ट्रंप ने संकेत दिए हैं कि अमेरिकी सेना की जब तक जरूरत होगी तब तक अफगानिस्तान में मौजूद रहेगी और आवश्यकता के अनुरूप कार्रवाई भी करेगी। यदि अमेरिका अब भी पाकिस्तान के खिलाफ कार्रवाई नहीं करता तो उसकी विश्वसनीयता पर बड़ा प्रश्नचिन्ह लग जाएगा।

CHINA & Its Support to Pakistan

हैरत नहीं कि चीन पाकिस्तान के बचाव में उतरा है। उसने दावा किया है कि पाकिस्तान आतंकवाद का खुद सबसे बड़ा शिकार है। चीन ने हमेशा तालिबान का पक्ष लिया है। रूस ने भी ट्रंप की नीति की निंदा की है। रूस पिछले कई वर्षों से तालिबान और पाकिस्तान के करीब जाता दिख रहा है। उसने तमाम रियायतें देकर ईरान के साथ भी नजदीकी कायम कर ली है। रूस के एक वरिष्ठ अधिकारी ने कहा कि अफगानिस्तान के संदर्भ में पाकिस्तान एक प्रमुख क्षेत्रीय ताकत है। उस पर ज्यादा दबाव क्षेत्रीय सुरक्षा की दृष्टि से घातक हो सकता है। पाकिस्तान के विदेश मंत्री ख्वाजा आसिफ ने भी चीन, रूस और तुर्की से मिले समर्थन को लपकने में देरी नहीं की। ऐसा कर वह अमेरिकी दबाव को कम करना चाहते हैं

1990 के दशक में जब पाकिस्तान तालिबान के समर्थन में आया था तब अमेरिका को लगा था कि दोनों की जोड़ी अफगानिस्तान में स्थिरता लगाएगी, लेकिन ये दोनों वहां अपना प्रभुत्व बढ़ाने लगे। लिहाजा तालिबान को उखाड़ फेंकने के लिए रूस, ईरान और भारत अफगानिस्तान के कद्दावर नेता अहमद शाह मसूद को मदद देने लगे, लेकिन 9/11 की घटना के दो दिन पूर्व आतंकवादियों ने मसूद की हत्या कर दी। अब अंतरराष्ट्रीय समीकरणों में एक बार फिर तब्दीली आई है। इसका फायदा उठाने के लिए भारत को समय रहते चतुराई भरी कूटनीतिक चालें चलनी होंगी।

अमेरिका के लिए अहम बनता भारत

#Dainik_Jagran

हाल के दो भाषण खासे अहम रहे। एक चीनी राष्ट्रपति शी चिनफिंग का और दूसरा अमेरिकी विदेश मंत्री रेक्स टिलरसन का। चिनफिंग जहां अपनी दोबारा ताजपोशी के अवसर पर तीन घंटे से अधिक लंबे भाषण में चीन को उन्नत बनाने का दृष्टिकोण साझा कर रहे थे तो टिलरसन नए वैश्विक सत्ता संतुलन में अमेरिका की अधपकी प्रतिक्रिया व्यक्त कर रहे थे।

- चिनफिंग ने 2050 तक चीन को दुनिया की सबसे बड़ी ताकत बनाने का महत्वाकांक्षी ढांचा पेश किया। वर्ष 2016 में जबसे डोनाल्ड ट्रंप अमेरिकी राष्ट्रपति बने हैं तबसे चिनफिंग ने खुद को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर ऐसे जिम्मेदार नेता के तौर पर पेश करना शुरू किया है जो जलवायु परिवर्तन और वैश्विक व्यापार जैसे मुद्दों को समझदारी के साथ सुलझाने को लेकर प्रतिबद्ध हैं।

- अमेरिका-चीन रिश्तों को बराक ओबामा ने इस दौर का सबसे महत्वपूर्ण द्विपक्षीय रिश्ता बताया, लेकिन ट्रंप प्रशासन की सोच कुछ अलग है।
- दक्षिण एशिया दौरे से पहले टिलरसन ने एशिया को लेकर अमेरिकी इरादे जाहिर करते हुए भारत को मुख्य साझेदार बताया। उनसे पहले अमेरिकी रक्षा मंत्री जिम मैटिस ने भी सितंबर में अपने भारत दौरे के दौरान कहा था कि भारत-अमेरिका साझेदारी में सुरक्षा 'प्रमुख रणनीतिक स्तंभों' में से एक है।
- टिलरसन ने केवल इसके फलक को और विस्तार दिया है। साथ ही उन्होंने चीन के उदय को आड़े हाथों लेते हुए कहा कि अक्सर वह जिम्मेदारी नही दिखाता और अंतरराष्ट्रीय कानूनों को ताक पर रखता है, जबकि भारत जैसे देश दूसरे देशों की संप्रभुता का सम्मान करते हुए नियमों के दायरे में ही काम करते हैं।
- दक्षिण चीन सागर में चीनी आक्रामकता को टिलरसन ने अंतरराष्ट्रीय कानूनों का मखौल उड़ाना बताया और कहा कि चीन जैसे गैर-लोकतांत्रिक देश के साथ अमेरिका के रिश्ते कभी भारत जैसे नहीं हो सकते।
- अपने पूर्ववर्ती की ही तरह ट्रंप प्रशासन ने भी चीन के साथ ताल मिलाते हुए कमान संभाली, लेकिन अब चीन को लेकर अमेरिका में खीझ बढ़ती जा रहा है, क्योंकि उत्तर कोरिया के सनकी शासक पर अपना प्रभाव रखने के बावजूद चीन उस पर कोई दबाव नहीं डाल रहा है। वहीं भारत को लेकर ट्रंप प्रशासन की नीति एकदम स्पष्ट है जिसमें ओबामा प्रशासन की समृद्ध विरासत को आगे बढ़ाया जा रहा है।

INDIA & America

भारत सरकार ने अमेरिका के साथ रिश्तों को प्रगाढ़ बनाने में खासी मेहनत की है। तीन साल के कार्यकाल में मोदी ने अमेरिका के पांच दौरे किए हैं। हालांकि भारत में तमाम लोगों ने ट्रंप के कूटनीतिक रवैये पर संदेह जताया है कि यह भारत के लिए नुकसानदेह हो सकता है, मगर सितंबर में मोदी की सफल अमेरिकी यात्रा और ट्रंप प्रशासन की अफगानिस्तान नीति में भारत को मिली प्रमुखता से ऐसी आशंकाएं निर्मूल साबित हुईं। अगर मोदी यह कहते हैं कि ओबामा प्रशासन के दौरान भारत-अमेरिका रिश्तों में हिचक का दौर समाप्त हुआ तो यह बात भी उतनी ही सही है कि वह ट्रंप प्रशासन को साधने में भी उतने ही सफल रहे हैं। वह ट्रंप का रुख उन व्यापक बुनियादी वास्तविकताओं की ओर करने में सफल रहे हैं जिनसे भारत-अमेरिका संबंध संचालित होते हैं और यह सिलसिला जॉर्ज डब्ल्यू बुश के समय से ही शुरू हुआ जिसमें बुश ने एलान किया था भारत को वैश्विक महाशक्ति बनाने में अमेरिका हरसंभव मदद करेगा। मोदी और ट्रंप की पिछली बैठक में पूरा ध्यान एशिया में शक्ति संतुलन पर केंद्रित रहा और उन्होंने सहमति जताई कि क्षेत्र में शांति और स्थिरता लाने में भारत और अमेरिका को कंधे से कंधा मिलाकर काम करना होगा। मोदी ने बार-बार दोहराया है कि भारत के विकास और सामरिक हितों की पूर्ति के लिए वह अमेरिका की अहमियत को स्पष्ट रूप से समझते हैं। इस बार भी उन्होंने कहा कि भारत के सामाजिक एवं आर्थिक कायाकल्प के लिए वह अमेरिका को सबसे प्रमुख साझेदार समझते हैं। भारत में भले ही कुछ आलोचक इसे देश की परंपरागत गुटनिरपेक्षता वाली नीति से विचलन मानें, लेकिन पिछली सरकारों के संकोच को दरकिनार करते हुए मोदी ने अपने फायदे की बात कहने में कोई हिचक नहीं दिखाई।

Trump & New south Asia Policy & India

ट्रंप प्रशासन ने अगस्त में ही नई दक्षिण एशिया नीति का एलान किया जिसमें भारत को केंद्रीय भूमिका दी गई है। इसमें पाकिस्तान पर सख्ती बरतने के साथ ही एक महत्वपूर्ण पहलू यह भी है कि अमेरिका भारत के साथ अपनी सामरिक भागीदारी को और मजबूत बनाएगा। ट्रंप ने कहा कि अफगानिस्तान में स्थायित्व लाने में हम भारत के योगदान की सराहना करते हैं। हम चाहते हैं कि वहां आर्थिक सहायता और विकास जैसे दूसरे मोर्चों पर भी भारत हमारी और ज्यादा मदद करे। ट्रंप की नीति भारत के लिए इस लिहाज से अहम है कि अभी तक पाकिस्तान की संभावित नाराजगी की आशंका में उसने भारत को अपनी 'अफ-पाक' नीति से दूर रखा हुआ था। अमेरिका के लिए अफगानिस्तान में भारत की भूमिका अब समस्या बढ़ाने वाले कारक की

नहीं, बल्कि समाधान दिलाने वाले की हो गई है। हिंद प्रशांत क्षेत्र में भारत के बढ़ते कद को देखते हुए अमेरिका की राय है कि इस क्षेत्र के लोकतंत्रों में व्यापक सहयोग एवं सहभागिता बढ़ाने की पहल की जाए। टिलरसन ने कहा भी कि हम अमेरिका, भारत और जापान के त्रिपक्षीय सहयोग के फायदे पहले ही महसूस कर रहे हैं। इसमें ऑस्ट्रेलिया जैसे सहयोगी को शामिल करने की भी हम संभावनाएं तलाश रहे हैं।

Equation of Quad Grouping

अक्टूबर में जापान के चुनावों में शिंजो एबी की भारी जीत ने भी अमेरिका-जापान-भारत-ऑस्ट्रेलिया की हिंद प्रशांत चौकड़ी को मूर्त रूप देने की दिशा में सोचने का मार्ग प्रशस्त किया। भारत-जापान-अमेरिका मालाबार नौसैनिक अभ्यास में अमेरिका ऑस्ट्रेलिया को भी शामिल करने को तत्पर है। मनीला में पूर्वी एशियाई सम्मेलन से इतर चारों पक्ष इस मसले पर आधिकारिक बैठक भी कर सकते हैं। ये चारों लोकतांत्रिक शक्तियां दक्षिण चीन सागर से लेकर हिंद महासागर और अफ्रीका तक के सामुद्रिक व्यापार को सुगम बनाने के साथ रक्षा सहयोग को मजबूत बना सकती हैं। हिंद प्रशांत क्षेत्र में यह समीकरण ऐसे दौर में बन रहा है जब अमेरिकी राष्ट्रपति यहां का दौरा कर रहे हैं। भले ही पूरा क्षेत्र ट्रंप प्रशासन की सुरक्षा प्रतिबद्धताओं को लेकर सशंकित हो और चीन के उभार को कोई चुनौती न मिल रही हो फिर भी यह मंच वैश्विक राजनीति और अर्थशास्त्र के मोर्चे पर नए सामरिक समीकरणों का संकेत करता है। भले ही ट्रंप ने अपने एशियाई दौरे की शुरुआत यह कहते हुए की हो कि कोई भी तानाशाह या शासन अमेरिकी संयम को कमतर करके न आंके, लेकिन इतना तो तय है कि चीन और उसके साथियों को साधना अमेरिका के लिए टेढ़ी खीर बन गया है।

अपने हितों के बचाव पर काम करे भारत

Need of a National Security policy

हाल की कई घटनाओं के बाद ऐसा प्रतीत हो रहा है कि देश को एक समग्र राष्ट्रीय सुरक्षा नीति विकसित करने की आवश्यकता है। इस दिशा में पहली चार पक्षीय शुरुआत सन 2007 में देखने को मिली जब भारत, अमेरिका, जापान और ऑस्ट्रेलिया की नौसेनाओं ने संयुक्त अभ्यास किया था। बाद में भारत की तत्कालीन संप्रग सरकार ने चीन की संवेदनशीलता को देखते हुए इसमें हिस्सेदारी लेना बंद कर दिया। एक दशक बाद इन चारों देशों के अधिकारियों ने मनीला में बैठक की और अब यह समूह औपचारिक रूप ले चुका है। कई अन्य द्विपक्षीय और त्रिपक्षीय समूह हैं जहां भारत हिस्सेदार है। इन सबका उद्देश्य और इनके लक्ष्य अलग-अलग हैं।

Americal Policy and India

हर अमेरिकी राष्ट्रपत्ति राष्ट्रीय सुरक्षा नीति (एनएसएस) के तहत वैश्विक सुरक्षा को लेकर अपना नजरिया पेश करता है। अमेरिकी राष्टा्रपति डॉनल्ड ट्रंप ने भी यही किया। उनकी बातों में चीन और रूस को साफ तौर पर संशोधनवादी और समस्या पैदा करने वाले देश बताया गया जो अमेरिकी हितों को नुकसान पहुंचा सकते हैं। अब यह बात उसकी रक्षा नीति में भी नजर आने लगी है। वहां अमेरिका एशिया प्रशांत क्षेत्र में खुद को चीन और रूस के साथ प्रतिस्पर्धा में देख रहा है। भारत का अलग से उल्लेख नहीं है लेकिन जाहिर है वह इस क्षेत्र के उन अहम देशों में शुमार है जिनके साथ अमेरिका तालमेल से काम करना चाहेगा।

- ट्रंप की एनएसएस भारत को असमंजस में डालती है क्योंकि उसमें भारत को उभरती हुई वैश्विक शक्ति और साझेदार देश कहा गया है। देश के अधिकांश लोगों के लिए यह प्रसन्नता की बात होगी लेकिन हमें इसके अर्थ का विश्लेषण भी करना होगा। भारत को एक ऐसी शक्ति का दर्जा दिया गया है जो वह फिलहाल नहीं है। दूसरा, रूस और चीन को स्पष्ट तौर पर अमेरिकी हितों के खिलाफ माना

गया है लेकिन एनएसएस का अनुमान यह मानकर चल रहा है कि भारत भी इससे समान रूप से प्रभावित है। यह सही नहीं है। आर्थिक दृष्टि से देखें तो हमारा जीडीपी चीन के जीडीपी के पांचवें और अमेरिका के जीडीपी के 10वें हिस्से के बराबर है। भारत और अमेरिका के बीच कारोबारी रिश्ते, चीन और अमेरिका के कारोबारी रिश्तों के पासंग में भी नहीं हैं। ऐसे में यह सोचना कि दोनों किसी जंग में शामिल होंगे, ठीक नहीं है।

- दूसरी ओर, चीन हमारा निकटस्थ पड़ोसी है। हमारी सीमा का बड़ा हिस्सा उससे लगता है और दोनों के बीच सैन्य संघर्ष की आशंका को पूरी तरह दरकिनार नहीं किया जा सकता है। एक अन्य स्तर पर रूस लंबे समय से भारत का मित्र है और हमारे हथियारों का बड़ा हिस्सा वहां से आता है। इसमें परमाणु क्षमता संपन्न पनडुब्बी और देसी हथियार निर्माण में सहायता शामिल है। हमारे सामरिक हित ईरान से भी जुड़े हैं जो ट्रंप को भले नापसंद हो लेकिन उसके पास ऊर्जा भंडार हैं और वह मध्य एशिया तक पहुंच आसान करता है। संक्षेप में कहें तो अमेरिका की एनएसएस में व्यक्त योजना में हम किस तरह ठीक बैठते हैं वह स्पष्ट नहीं है। आतंकवाद से जुड़ी हमारी दिक्कतें इसके अलावा हैं
- ऊपर हमने जिन चार देशों का जिक्र किया उनका अघोषित साझा लक्ष्य है चीन को थामना। जबकि अन्य तमाम परिदृश्य अनिश्चितताओं से भरे हुए हैं। अमेरिका की बात करें तो चीन साफ तौर पर उसकी वैश्विक श्रेष्ठता को चुनौती दे रहा है। भारत के लिए भी वह प्रमुख चुनौती है। इससे एक तरह की सुसंगतता बनती है लेकिन वह दूर की कौड़ी है क्योंकि चीन की सीमा अमेरिका से नहीं लगती और भारत अमेरिका के लिए चीन की आर्थिक महत्ता की बराबरी नहीं कर सकता। यानी भारत के वैश्विक ताकत बनने की बात काफी हद तक शाब्दिक है। इसका ताल्लुक शायद भारत की रक्षा खरीद में अमेरिकी रुचि से है। 1,500 करोड़ डॉलर का यह कारोबार अगले 5-6 साल में आसानी से 2,500 करोड़ डॉलर तक पहुंच सकता है। ऐसे में इस बाजार को लुभाना समझ में आता है। भारत हिंद महासागर क्षेत्र की सबसे बड़ी और सैन्य क्षमता संपन्न शक्ति है ऐसे में उसे साझेदार बताना समझ में आता है।

भारत के मुद्दे अलग हैं। अमेरिका के साथ मजबूत रक्षा रिश्ते जहां उसे अच्छी सैन्य क्षमताओं से लैस करेंगे, वहीं चीन के साथ हमारे समीकरणों के लिहाज से भी यह रिश्ता अहम है। चीन के साथ हमें विवाद नहीं सहयोग चाहिए। पाकिस्तान और अन्य दक्षिण एशियाई पड़ोसी देशों के साथ संबंध भी पूरे गणित को जटिल करते हैं। रूस के साथ रिश्तों को अमेरिका नकारात्मक अर्थों में देखता है लेकिन ये भी हमारे लिए अहम हैं। हाल के वर्षों में सैन्य संबंध कायम रहने के बावजूद एक हद तक भारत और रूस के रिश्ते प्रभावित हुए हैं। उधर रूस और चीन के बीच के रिश्तों में हाल के वर्षों में करीबी आई है। दक्षिण चीन सागर की बात करें तो हाल ही में दिल्ली में आसियान देशों के नेताओं के जुटाव और समुद्री सुरक्षा पर जोर के बावजूद सभी देश उस क्षेत्र को लेकर हमारे रुख के साथ नहीं हैं। उनमें से कई देश ऐसे हैं जिनके लिए चीन सबसे बड़ा कारोबारी साझेदार है। कहने का अर्थ यह है कि उभरती विश्व व्यवस्था में तमाम अनिश्चितताएं हैं जो भारत की सुरक्षा को प्रभावित कर सकती हैं और जिनका प्रबंधन करने की दिशा में हमें सावधानीपूर्वक आगे बढऩा होगा।

इस परिदृश्य में एक विरोधाभासी प्रश्न उत्पन्न होता है। पहली बात, एशिया प्रशांत क्षेत्र में चीन को थामना आवश्यक है और इसके पक्ष में अपने तर्क हैं। वहीं दूसरी ओर, चीन एक ऐसी बड़ी ताकत भी है जिसके साथ तमाम उभरते देश रिश्ता रखना चाहेंगे। भारत की बात करें तो ट्रंप की एनएसएस से ऐसे सवाल उठते हैं जिनका सामना हमने अब तक नहीं किया है। एक दुविधा यह भी है कि एक पुराने मित्र से रिश्ते बरकरार रखते हुए एक ऐसे नए देश से रिश्ते कैसे कायम हों जबकि दोनों एक दूसरे के खिलाफ हों। दूसरी दुविधा है संभावित शत्रु के साथ संवाद।

हमारे आसपास कई ऐसे देश हैं जिनसे हमारी सुरक्षा चिंताएं जुड़ी हुई हैं। शतरंज की सी इस बिसात पर कैसे आगे बढ़ा जाए और उपयुक्त क्षमताओं का विकास कैसे हो, नीति निर्माताओं के सामने यह एक अहम प्रश्न है। अधिकांश बड़ी शक्तियां अपनी जरूरतों के मुताबिक नीतियां बनाकर सामने रखती हैं लेकिन अब तक भारत ऐसा करने से बचता रहा है। शायद यह भी एक वजह है कि हम अपने हितों की रक्षा के लिए उचित नीतियां नहीं बना पाए हैं। अब समय आ गया है कि हम इसमें सुधार करें

6. मालदीव को लेकर भारत की नीति क्या होनी चाहिए? | India Maldive relation

Recent events in Maldive
मालदीव के राष्ट्रपति अब्दुल्ला यमीन लोकतांत्रिक राजनीति को लगातार हाशिये पर धकेलते रहे हैं, लेकिन अब लग रहा है कि भारत के इस पड़ोसी देश में लोकतंत्र फिर मुख्यधारा में आ जाएगा. एक नाटकीय घटनाक्रम के तहत: पिछले हफ्ते यहां के सुप्रीम कोर्ट ने पूर्व राष्ट्रपति मोहम्मद नशीद और उनके साथ ही दूसरे राजनीतिक बंदियों को तुरंत रिहा करने का आदेश दिया है. उन्हें 2012 में पद से हटाया गया था और दो साल पहले आतंकवाद के आरोप में हिरासत में लिया गया था.

तानाशाही रवैए वाली यमीन सरकार के लिए सुप्रीम कोर्ट का यह आदेश बड़ा झटका साबित होने जा रहा है. कोर्ट ने इस आदेश के साथ यह भी कहा है कि नशीद और अन्य लोगों के खिलाफ चले मुकदमों से घरेलू और अंतरराष्ट्रीय कानूनों का उल्लंघन हुआ था. नशीद हालांकि इस समय जेल में नहीं हैं. हिरासत में लिए जाने के कुछ समय बाद ही वे इलाज के लिए बाहर चले गए थे और फिर उन्हें ब्रिटेन ने शरण दे दी. सुप्रीम कोर्ट ने इस फैसले के साथ विपक्षी 12 सांसदों को भी बहाल कर दिया है. इन्होंने 2016 में विपक्ष के साथ मिलकर यमीन पर महाभियोग चलवाने की कोशिश की थी और इसके बाद इन्हें संसद (मजलिस) के लिए अयोग्य ठहरा दिया गया था. मालदीव में इस साल राष्ट्रपति चुनाव होने हैं. अब तक इनके एकतरफा होने की संभावना लग रही थी, लेकिन सुप्रीम कोर्ट के इस अहम फैसले ने नशीद और विपक्ष के लिए लड़ाई की जगह बना दी है. विपक्ष ने यमीन की बर्खास्तगी को लेकर कोर्ट में एक अपील दायर की थी और यह फैसला उसी पर आया है.

यह अफसोसजनक है कि अब तक यमीन ने सुप्रीम कोर्ट के इस फैसले को लागू नहीं किया. इसके उलट सरकार ने पुलिस प्रमुख को पद से हटा दिया है जिन्होंने आदेश लागू करने की बाद कही थी. यहां सोमवार से संसद का सत्र शुरू होना था, लेकिन अब इसकी संभावना बहुत कम है क्योंकि सेना ने संसद भवन घेर लिया है और यहां किसी को घुसने की इजाजत नहीं दी जा रही है.

आशंका तो यहां तक जताई जा रही है कि यमीन आपातकाल की घोषणा कर सकते हैं. हालांकि अब जो परिस्थितियां बन चुकी हैं उनमें वर्तमान राष्ट्रपति का पद छोड़ना निश्चित है. सुप्रीम कोर्ट का फैसला आने के बाद से राजधानी माले की सड़कों पर लोग उनके इस्तीफे की मांग को लेकर प्रदर्शन कर रहे हैं. यमीन ने कहा है कि वे समय-पूर्व चुनाव के लिए तैयार हैं, लेकिन यह भरोसा करना मुश्किल है कि उनके राष्ट्रपति रहते मालदीव में स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव हो पाएंगे.

फिलहाल तो सरकार ने सुप्रीम कोर्ट के आदेश पर ही सवाल उठा दिए हैं. सरकार अगर इस मुद्दे पर कोर्ट से टकराव के रुख पर आगे बढ़ती है तो मालदीव का संकट और गहरा जाएगा. इस समय यमीन के लिए सबसे समझदारी भरा कदम यही होगा कि वे कोर्ट के आदेश को पूरी तरह लागू करें जिससे नशीद के यहां लौटने का रास्ता साफ हो. चूंकि कुछ महीने बाद ही चुनाव हैं तो यमीन को पद छोड़कर लोकतांत्रिक चुनाव के लिए शांतिपूर्ण माहौल बनाने में मदद करनी चाहिए.

Indian Reaction

भारत ने सुप्रीम कोर्ट के इस फैसले को लोकतांत्रिक भावना के मुताबिक बताते हुए इसका स्वागत किया है. साथ ही भारत सरकार ने कहा है कि यमीन सरकार को इस फैसले का सम्मान करना चाहिए. भारत नशीद और विपक्षी पार्टियों का खुलकर समर्थन करता रहा है. इसमें कोई चौंकाने वाली बात भी नहीं है क्योंकि यमीन सरकार ने बीते समय में भारत को लगातार हाशिये पर करने की कोशिश की है. इसका पहला बड़ा संकेत तब मिला था जब उसने माले एयरपोर्ट की विकास परियोजना से भारत की एक निजी कंपनी को अलग कर दिया. वहीं दूसरी तरफ यमीन चीन के साथ गलबहियां करते भी नजर आते रहे हैं.
o दो साल पहले मालदीव की सरकार ने विदेशियों को वहां संपत्ति खरीदने की इजाजत देने से जुड़ा कानून बनाया है. फिर हाल ही में उसने चीन के साथ मुक्त व्यापार समझौता भी कर लिया है. बताया जाता है कि यह समझौता कुछ ही घंटों में तैयार हुआ था और इसे हड़बड़ी में किया गया है.
o नशीद खुलकर भारत से राजनीतिक समर्थन मांगते रहे हैं. इसमें कोई दोराय नहीं है कि अगर वे सत्ता में आते हैं तो यमीन के मुकाबले भारत के ज्यादा करीब होंगे. लेकिन यहां भारत को संभलकर चलने की जरूरत है. इसके लिए उसे श्रीलंका का उदाहरण याद रखना चाहिए. श्रीलंका में इस समय 'भारत समर्थक' सरकार है फिर भी उसने चीन से करीबी संबंध बनाने की कोशिश की है. भारत को इस वास्तविकता का सामना करने के लिए तैयार रहना चाहिए कि अगर नशीद राष्ट्रपति बनते हैं तो मालदीव भी श्रीलंका के रास्ते पर चल सकता है.

हर देश के लिए अपने राष्ट्रीय हित सबसे ऊपर होते हैं. दक्षिण एशिया में भारत के दबदबे से पैदा हुए डर और असुरक्षाओं के चलते छोटे देश चीन की तरफ झुककर एक संतुलन बनाने की कोशिश करते रहे हैं. पाकिस्तान को छोड़ दें तो ये देश भारत और चीन, दोनों से फायदा उठाने की कोशिश कर रहे हैं. अगर आर्थिक दबदबे की बात करें तो भारत इस खेल में चीन के आगे नहीं ठहरता, लेकिन इन देशों से ऐतिहासिक-राजनीतिक संबंधों के मामले में भारत फायदेमंद स्थिति में है. कुल मिलाकर सत्ता यमीन के पास रहे या नशीद को मिले, भारत को मालदीव से इस तरह के संबंध विकसित करने जरूरत है जो चीन से होड़ पर आधारित न हों

6.(II) मालदीव पर मौन से नहीं चलेगा काम (Silance not solution to maldive crisis)

Maldive and International Dynamics

भारत एक अरसे से 'नेबर्स फर्स्ट यानी 'पड़ोसी पहले की नीति को अपनी विदेश नीति में वरीयता दे रहा है, लेकिन इसे विडंबना ही कहा जाएगा कि भारत के कुछेक छोटे पड़ोसी देश अविश्वास और बाह्य आकर्षण के सिंड्रोम का शिकार हैं। इसी वजह से इन देशों में चीनी रणनीति को आधार मिल जाता है और घरेलू स्तर पर अस्थिरता व संघर्ष जैसी स्थितियां उत्पन्न् हो जाती हैं। फिलहाल यही स्थिति मालदीव में देखी जा सकती है। आलम यह है कि इस माहौल में मालदीव की सरकार अपने दूतों को चीन, पाकिस्तान व सऊदी अरब भेज रही है, लेकिन इस मुल्क की विपक्षी पार्टियां, पूर्व राष्ट्रपति और न्यायपालिका भारत की ओर आस भरी नजरों से देख रहे हैं। ऐसे में प्रश्न यह उठता है कि भारत किस विकल्प को चुने? क्या अपने राष्ट्रीय हितों और मालदीव के नागरिकों के अधिकारों की सुरक्षा को देखते हुए यह आवश्यक नहीं है कि भारत वहां ऑपरेशन कैक्टस का इतिहास पुन: दोहराए? या वह अपने आदर्श के अनुरूप तटस्थ रहने की नीति का वरण करे? एक सवाल यह भी उठता है कि यदि भारत मालदीव में सक्रियता दिखाता है तो चीन इसे किस रूप में लेगा और किस तरह की प्रतिक्रिया करेगा?
Maldive : internal factors or External factors ?

हिंद महासागर में स्थित लगभग सवा चार लाख की आबादी वाले लघु पड़ोसी देश मालदीव में पिछले कुछ समय से जो कुछ भी हो रहा है, उसे सिर्फ अंदरूनी सियासी उथल-पुथल तक सीमित नहीं माना जा सकता, बल्कि इसके दूरगामी निहितार्थ हैं। यह कहीं न कहीं भारतीय हितों को भी प्रभावित करता है। आबादी की

दृष्टि से मालदीव भले ही महत्वपूर्ण न हो और उसकी आर्थिक हैसियत बड़ी न हो, लेकिन हिंद महासागर में उसकी भौगोलिक स्थिति उसे सामरिक दृष्टि से बेहद महत्वपूर्ण बना देती है। विशेषकर जब चीन वहां निर्णायक रणनीतिक स्थिति में हो, सऊदी अरब धार्मिक-आर्थिक रूप से मालदीव की मौजूदा सरकार का समर्थक बना हो और पाकिस्तान धार्मिक-सैन्य रूप से वहां मजबूत हैसियत रखता हो, तब वहां उभरने वाली कोई भी हलचल हमारे लिए भी कहीं ज्यादा संवेदनशील और सचेत करने वाली हो जाती है।

Peeping into Maldivian History

¬ यदि हम अतीत के कुछ पन्ने पलटें तो स्पष्ट हो जाएगा कि मालदीव में आज जो सियासी ड्रामा चल रहा है, उसकी पटकथा बहुत पहले ही लिखी जा चुकी थी, अर्थात 2012 से पहले ही, जब मोहम्मद नशीद को राष्ट्रपति पद से हटाया गया था। भारतीय राजनय को उसी समय मालदीव की स्थिति को सही से समझना और फिर उसके मुताबिक एक्शन लेना था। लेकिन उस समय भारतीय राजनय ऐसा करने में नाकाम रहा। नतीजा यह हुआ कि भारत के प्रति सकारात्मक, मैत्रीपूर्ण रवैया रखने वाले मोहम्मद नशीद सत्ता से बाहर हो गए और अब निर्वासित जीवन बिता रहे हैं। मोहम्मद नशीद की असफलता के बाद वहां की सत्ता कट्टरपंथी अब्दुल्ला यामीन के हाथों में चली गई। हालांकि उस समय खेले गए इस राजनीतिक ड्रामे में पूर्व राष्ट्रपति मामूल अब्दुल गयूम की भी भूमिका अहम रही थी, जिन्हें यामीन ने नजरबंद कर रखा है। सेना और कट्टरपंथी तत्व दो अन्य ऐसे घटक थे, जो तबसे लेकर अब तक यामीन के साथ हैं और इन्हीं की बदौलत यामीन इस हद तक जाने की कोशिश कर पा रहे हैं।

¬ यामीन ने सत्ता हासिल करने के बाद सेना और कट्टरपंथ की ताकत को आधार बनाकर अपने विरोधियों को खत्म किया, उन्हें जेल में डाला तथा लोकतंत्र को कमजोर कर दिया। अपने इन प्रयासों के साथ वे निरंकुश एकाधिकारवादी शासक बनने की ओर अग्रसर होते गए। वर्ष 2018 तक पहुंचते-पहुंचते वे मुतमईन हो गए कि अब उन्हें चुनौती देने वाला कोई नहीं बचा। लेकिन पिछले दिनों जब सुप्रीम कोर्ट ने यह आदेश दिया कि सभी राजनीतिक बंदियों को रिहा किया जाए, तब राष्ट्रपति यामीन ने बड़ा झटका महसूस किया। अब उनके पास दो विकल्प थे। एक यह कि वे अपने फैसले वापस ले लें और दूसरा यह कि उन्हें बरकरार रखते हुए आगे बढ़ें। यदि पहला विकल्प चुनते तो उन्हें सत्ता छोड़नी पड़ जाती और नशीद के लिए रास्ता साफ हो जाता। इस स्थिति में यामीन आने वाले समय में जेल भी पहुंच सकते थे। इसलिए उन्होंने सुप्रीम कोर्ट के आदेश को मानने से इनकार करते हुए आपातकाल की घोषणा कर दी। आपातकाल यामीन के लिए आखिरी दांव था। लेकिन सवाल यह उठता है कि यामीन इस दांव को किसके दम पर खेल गए? अपने या फिर चीन के अथवा चीन, सऊदी अरब और पाकिस्तान के दम पर?

¬ इसके बाद मालदीव के पूर्व राष्ट्रपति और विपक्ष के नेता मोहम्मद नशीद ने ट्वीट के जरिए भारत से गुहार लगाई कि उसे सैन्य हस्तक्षेप कर राष्ट्रपति यामीन द्वारा गिरफ्तार कराए गए जजों और विपक्ष के नेताओं को आजाद कराना चाहिए।भारत इस संदर्भ में कोई प्रतिक्रिया देता, इससे पहले ही चीन के विदेश मंत्रालय के प्रवक्ता गेंग शुआंग की तरफ से बयान आ गया किमालदीव की संप्रभुता को ध्यान में रखते हुए अंतरराष्ट्रीय समुदाय को इस मामले में कोई भी रचनात्मक कदम नहीं उठाना चाहिए। ऐसा करने से मालदीव की स्थिति और बिगड़ सकती है।चीनी प्रवक्ता ने भारत का नाम तो नहीं लिया, लेकिन चीन का इशारा किधर था, यह भारत भी अच्छी तरह से समझ रहा है। सवाल यह उठता है कि चीन को ऐसा क्यों कहना पड़ा? वह दक्षिण एशियाई देशों का नेता या संरक्षक तो है नहीं!

Chinese factor at play

दरअसल मालदीव की विपक्षी पार्टियों का कहना है कि राष्ट्रपति यामीन चीन के समर्थन की वजह से ऐसा कदम उठा रहे हैं। उन्होंने चीन के साथ मुक्त व्यापार समझौता किया है और देश में चीन की कई

परियोजनाओं कोे मंजूरी दी है। मालदीव चीन के वन बेल्ट वन रोड प्रोजेक्ट का समर्थन भी कर रहा है (हाल ही में मालदीव ने चीन के साथ मैरीटाइम सिल्क रूट से जुड़े एमओयू भी साइन किए हैं) और उसका मारओ बंदरगाह चीन की 'स्ट्रिंग ऑफ पर्ल्स पॉलिसी का एक अहम भाग है। साफ हैकि हिंद महासागर में मालदीव की भौगोलिक स्थिति सामरिक लिहाज से चीन को अपने लिए बेहद उपयोगी लग रही है। चीन-मालदीव की यह दोस्ती भारत को घेरने या रणनीतिक रूप से भारत को कमजोर करने संबंधी एक भू-सामरिक फ्रंट तैयार करने की जुगत लगती है, जिसके जरिए चीन अपने विस्तारवादी मंसूबे पूरा करना चाहता है।

Concluding mark

कुल मिलाकर मालदीव की समस्या केवल घरेलू नहीं है, क्योंकि राष्ट्रपति यामीन के पीछे असल ताकत के रूप में चीन और सहयोगियों के रूप पाकिस्तान व कुछ हद तक सऊदी अरब खड़े हुए हैं। यानी अब राष्ट्रपति यामीन के सफल होने का मतलब होगा चीन का सफल होना। फिर असफल कौन होगा? इसका हम सहज ही अनुमान लगा सकते हैं। अत: भारत के लिए यह आवश्यक है कि वह मालदीव में सक्रिय हस्तक्षेप करे। किंतु भारत के हस्तक्षेप का आशय होगा चीन के साथ टकराव। यानी चीन मालदीव को भूटान (डोकलाम) की तरह संघर्ष का मैदान बनाना चाहेगा। ऐसे में भारत को कोई अग्रगामी कदम उठाने से पहले चीन को सामने रखना होगा। लेकिन यदि भारत ऐसा नहीं करता है तो वह न केवल मालदीव, बल्कि अन्य सदाशय पड़ोसी देशों की लोकतांत्रिक शक्तियों तथा उनकी जनता को भी यह संदेश देने से चूक जाएगा कि भारत उनकी सुरक्षा, स्थिरता व प्रगति के प्रति सजग और संवेदनशील है।

6.(III) मुक्तिदाता न बने भारत (India Maldive)

#Rashtriya_Sahara

Maldive current events

हिन्द महासागर के तटीय क्षेत्रमें स्थित मालदीव अपने आंतरिक संकट से जूझ रहा है। निरंकुश और अधिकारवादी राष्ट्रपति अब्दुल्ला यामीन ने सुप्रीम कोर्ट के आदेश की अवहेलना करके देश में आपातकाल थोप दिया है। मुख्य न्यायाधीश अब्दुल्ला सईद और एक अन्य न्यायाधीश अली हमीद को गिरफ्तार कर लिया गया है। सरकार के इस फैसले के खिलाफ जगह-जगह विरोध प्रदर्शन हो रहे हैं, और काफी पहले से चली आ रही राजनीतिक अस्थिरता के कारण देश की अर्थव्यवस्था और राजनीति, दोनों बुरी तरह से प्रभावित हो रही हैं।

इस नाटकीय राजनीतिक घटना की शुरुआत सुप्रीम कोर्ट के उस आदेश के बाद हुई जिसमें आठ विपक्षी सांसदों की रिहाई के साथपूर्व राष्ट्रपति मोहम्मद नशीद के खिलाफलगाए गए झूठे आरोप को रद्द किया जाना था। मोहम्मद नशीद 2008 से 2012 तक राष्ट्रपति रहे हैं। इसी दौरान उन पर क्रिमिनल कोर्ट के मुख्य न्यायाधीश को एक सैनिक शिविर में हिरासत में रखने का आरोप लगा था। इस मामले ने इतना जोर पकड़ा कि उन्हें अपने पद से इस्तीफा तक देना पड़ा था। इसी के बाद 2013 में चुनाव की घोषणा हुईऔर अब्दुल्ला यामीन देश के पांचवे राष्ट्रपति बने। स्वभाव से क्रूर और निरंकुश यामीन की सरकार ने नशीद के खिलाफ आतंकवादी गतिविधियों में लिप्त होने का फर्जी आरोप लगा कर गिरफ्तार कर लिया। पश्चिमी देशों के दबाव के बाद उन्हें इलाज के लिए विदेश जाने की अनुमति मिल गई। फिलहाल वह श्रीलंका में निर्वासित हैं, और मालदीव की राजनीतिक घटनाक्रम पर नजर बनाए हुए हैं।

Maldive and importance for India

¬ मालदीव सामरिक दृष्टि से भारत के लिए विशेष अहमियत रखता है, क्योंकि उसका समस्त जलमार्ग हिन्द महासागर से होकर गुजरता है।
¬ यही जलमार्ग नई दिल्ली को पूर्व एशिया, अफ्रीका और ऑस्ट्रेलिया से जोड़ता है। इसलिए भारत इसे अपने राजनीतिक-आर्थिक प्रभाव वाला क्षेत्र मानता है। मालदीव की राजनीतिक उथल-पुथल की घटना पर भारत ने जिस तरह से प्रतिक्रिया व्यक्त की है, उससे पूर्व राष्ट्रपति मोहम्मद नशीद और विपक्षी दलों के नेताओं के प्रति उसकी सहानुभूति जाहिर होती है।

मोहम्मद नशीद ने दो कारणों से यह सहानुभूति अर्जित की है। एक, वर्तमान यामीन सरकार ने मालदीव एयरपोर्ट को विकसित और आधुनिक बनाने के काम में लगी एक भारतीय निजी कंपनी का काम रोक कर उसे स्वदेश भेज दिया और दूसरे, अब्दुल्ला यामीन का चीन के प्रति झुकाव। हिन्द महासागर क्षेत्रमें चीन का बढ़ता प्रभाव भारत की सुरक्षा के लिएचिंता का कारण हो सकता है। जाहिर है कि वह मूकदर्शक बना नहीं रह सकता। इसलिए नई दिल्ली ने सुप्रीम कोर्ट के आदेश का स्वागत करते हुए यामीन सरकार से उसका पालन करने की अपील की थी। मालदीव में आपातकाल की घोषणा के बाद पूर्व राष्ट्रपति नशीद ने यामीन की सरकार को बर्खास्त करने के लिए भारत से सैन्य हस्तक्षेप करने की मांग की है।**लेकिन सवाल यह है कि इस नई विश्व व्यवस्था में भारत के लिए क्या संभव है कि ''मुक्तिदाता' की भूमिका निभा पाए, जैसा कि 1951 में उसने नेपाल के शासक राजा त्रिभुवन के समय निभाई थी।**

¬ अफगानिस्तान में सोवियत संघ का सैनिक हस्तक्षेप और इराक व सीरिया में अमेरिकी सैनिक हस्तक्षेपों का अंजाम हम सबको पता है?

¬ पूर्व प्रधानमंत्री राजीव गांधी के समय श्रीलंका में शांति सेना भेजने का दुष्परिणाम भारत भुगत चुका है। भारत अगर मालदीव में सैनिक हस्तक्षेप करता है, तो इसके परिणाम विपरीत ही निकलेंगे।

वैश्वीकरण से राजनीतिक चेतना की प्रक्रिया मजबूत हुई है, और किसी भी देश का नागरिक इसे किसी भी कीमत पर बर्दाश्त नहीं करेगा कि उसके देश के अंदरूनी मामलों में कोईविदेशी शक्ति सीधे तौर पर हस्तक्षेप करे। यह राष्ट्रीय चेतना निरंकुश और अधिकारवादी राष्ट्रपति यामीन के पक्ष में जा सकती है, जो उन्हें तानाशाही की ओर ले जाएगी। राष्ट्रपति यामीन इस तय से परिचित हैं कि भारत की सहानुभूति मोहम्मद नशीद और विपक्षी नेताओं के साथहै, और नई दिल्ली उनके खिलाफकोईकार्रवाईकर सकती है। आम तौर पर हर निरंकुश और तानाशाह शासक भीतर से डरपोक होता है। इसीलिए वह लोकतंत्र विरोधी कार्रवाई के पक्ष में समर्थन जुटाने के लिए अपने विशेष दूत चीन, पाकिस्तान और सऊदी अरब भेज रहे हैं।

- भारत स्थित मालदीव के राजदूत अहमद मोहम्मद की बातों को मानकर चलें तो ''विशेष दूतों की प्रस्तावित यात्रा का पहला चरण भारत था पर भारतीय नेतृत्व के पूर्व निर्धारित कार्यक्रम के कारण ऐसा नहीं हो पाया।' लेकिन क्या उनकी बातों पर सहज विास किया जा सकता है। भारतीय नेतृत्व कहने का उनका आश्य स्पष्ट नहीं हो सका है। अगर प्रधानमंत्री विदेश यात्रा पर जा रहे हैं तो उनकी अनुपस्थिति में राष्ट्रपति, उप राष्ट्रपति, गृहमंत्री और विदेश मंत्री में किसी से भी मालदीव के विशेष दूत मुलाकात कर सकते हैं। चीनी विदेश मंत्रालय के प्रवक्ता गेंग शुआंग ने यह कहकर चीन का रुख साफ कर दिया कि अंतरराष्ट्रीय समुदाय को मालदीव की संप्रभुता एवं क्षेत्रीय अखंडता का सम्मान करना चाहिए। जाहिर है चीन का इशारा भारत की ओर ही था।
- चीन दक्षिण एशिया में अपनी विस्तारवादी नीतियों को जारी रखते हुए पाकिस्तान, नेपाल, मालदीव और श्रीलंका में अपना आधारभूत ढांचा खड़ा करना चाहता है। इन देशों को हथियारों की आपूत्तर्ि करते हुए अरबों डॉलर का अनुदान देकर मदद कर रहा है। इसके चलते ये सभी देश धीरे-धीरे चीन के नियंतण्रमें चले जा रहे हैं। मालदीव की वर्तमान सरकार चीन के हितों के अनुकूल काम कर रही है। भारतीय उपमहाद्वीप के सभी छोटे-छोटे देश अपनी सुरक्षा को लेकर हमेशा भयभीत

रहते हुए भारतीय शक्ति संतुलन को साधने के लिए चीनी कार्ड खेलते हैं। इन देशों में चीन का भारी निवेश और आर्थिक मदद भारत को इस खेल से भारत को बाहर कर देता है। ऐसे में यह अहम सवाल उठता है कि भारत को क्या करना चाहिए? यह सच है कि यामीन की तुलना में मोहम्मद नशीद ज्यादा भारत समर्थक हैं। लेकिन यह भी उतना ही सच है कि सभी देश अपनी राष्ट्रीय हितों के अनुकूल ही अपनी नीतियां बनाते हैं। आखिर भारतीय समर्थक श्रीलंका की सरकार ने अपने अंतरराष्ट्रीय बंदरगाह हंबनतोता चीनी कंपनियों को सौंप दिया है। इसलिए इस बात की क्या गारंटी है कि यदि नशीद सत्ता में लौटते हैं तो क्या उनकी सरकार भारतीय हितों के अनुकूल काम करेगी? इन परिस्थितियों में भारत के लिए यही बेहतर होगा कि मालदीव के मसले पर फूंक-फूंक कर अपना कदम बढ़ाएं।

MIDDLE EAST

1.क्या OMAN से समझौता खाड़ी क्षेत्र में भारत की सैन्य कूटनीति की एक नई शुरुआत

प्रधानमंत्री की OMANयात्रा की सबसे बड़ी उपलब्धि नई दिल्ली और मस्कट के बीच हुआ एक विशेष समझौता है. इसके तहत अब भारत इस खाड़ी देश के दुक्म बंदरगाह का सैन्य इस्तेमाल कर सकता है. हालांकि यह समझौता बहुत पहले हो जाना चाहिए था. खाड़ी क्षेत्र की यह सल्तनत भारत के साथ सुरक्षा संबंधों को मजबूत करने में हमेशा दिलचस्पी दिखाती रही है, लेकिन नई दिल्ली की तरफ से उसे ज्यादातर मौकों पर ठंडी प्रतिक्रियाएं ही मिलीं.

Peeping into history: India Oman Relation

¬ पूरी 19वीं और आधी बीसवीं सदी तक जब भारत में ब्रिटिश राज था, तब आधिकारिक रूप से ओमान और अरब खाड़ी के दक्षिण-पूर्वी देशों की सुरक्षा भारतीय शासन के ही जिम्मे थी. लेकिन आजादी के बाद गुटनिरपेक्ष आंदोलन का अगुवा होने के नाते धीरे-धीरे भारत ने खुद को इस भूमिका से दूर कर लिया. वहीं जब ब्रिटेन ने पूर्वी स्वेज की तरफ से अपनी सेना हटाई और 1971 में खाड़ी देशों को स्वतंत्रता दे दी तो इनमें से ज्यादातर ने सुरक्षा साझेदारी के लिए भारत की तरफ देखना शुरू किया.

¬ ओमान भी इन देशों में शामिल था और 1972 में भारत ने उसके साथ एक रक्षा सहयोग समझौता कर लिया. इसके तहत भारत ने उसकी नई गठित नौसेना के साथ अपने नौसिनिकों की भी तैनाती की थी. लेकिन फिर धीरे-धीरे खुद भारत के सैन्य ढांचे में चरमराहट आने लगी और विदेश नीति ज्यादा सैद्धांतिक हो गई और तब ओमान के साथ-साथ खाड़ी के दूसरे देशों से भी हमारे सुरक्षा संबंध कमजोर पड़ने लगे.

Turning point 1991

1991 के बाद भारत ने फिर नए सिरे से दूसरे देशों की ओर देखना शुरू किया. तब ओमान ने रक्षा सहयोग समझौते को पुनर्जीवित करने की पहल की जो 2005 में लागू हो गया. इसके बावजूद भारत ने सैन्य मेल-मिलाप में ज्यादा गर्मजोशी नहीं दिखाई. कहा जाता है कि इस दौरान भारतीय नौसेना और विदेश मंत्रालय तो हिंद महासागर में अपने प्रभुत्व का विस्तार करने के लिए उत्सुक रहे, लेकिन रक्षा मंत्रालय की नौकरशाही सैन्य कूटनीति के विचार से सहमत नहीं हो पाई.

वहीं दूसरी तरफ चीन की पीपल्स लिबरेशन आर्मी यानी पीएलए हिंद महासागर में मौजूद देशों के साथ

साझेदारियां करते हुए अपना दबदबा बढ़ाती रही. हालांकि भारत के लिए ओमान जैसे मित्र देशों के साथ अपनी नौसेना की साझेदारी को चीन के चश्मे से देखना एक बड़ी गलती होगी. नई दिल्ली को पाकिस्तान के ग्वादर बंदरगाह में चीनी नौसेना की उपस्थिति के जवाब में दुक्म या दूसरे बंदरगाहों का इस्तेमाल करने की जरूरत नहीं है.

Why OMAN is Important for India

ओमान या दूसरे देशों के साथ सैन्य संबंध मजबूत करना भारत के लिए अन्य वजहों से बहुत महत्वपूर्ण है. आने वाले समय में भारत का अंतरराष्ट्रीय कारोबार तेजी से बढ़ने की उम्मीद है. ऐसे में सुदूरवर्ती समंदर में अपने व्यापारिक हित सुरक्षित रखने के लिए भारत को हिंद महासागर के एक बड़े हिस्से में सैन्य सुविधाएं चाहिए. जबकि इस क्षेत्र में मौजूद छोटे-छोटे देश सामरिक अनिश्चितताओं के चलते भारत से सुरक्षा संबंध प्रगाढ़ करना चाहते हैं.यह दुर्भाग्यपूर्ण ही कहा जाएगा कि नई दिल्ली अब तक इन मौकों का फायदा उठाने से हिचकती रही. हालांकि मोदी विदेश नीति के मोर्चे पर तेजी दिखा रहे हैं, लेकिन उनके लिए अब भी उच्च सुरक्षा संगठनों में आधुनिकीकरण के खिलाफ जमी जड़ता को तोड़ने का काम बाकी है. इसकी वजह से ही भारत की सैन्य कूटनीति बाधित हो रही है. इस मोर्चे पर सुधार के बिना खाड़ी क्षेत्र और इससे आगे भी, भारत के रक्षा सहयोग को जरूरी गति हासिल नहीं हो पाएगी.

2.भारत को चाहिए एक मजबूत मध्य-पूर्व नीति (Middle east policy)

#Punjab_Kesari
फिलिस्तीन जाने वाले आम पर्यटक अधिकतर मुस्लिम अथवा धर्म परायण ईसाई होते हैं। ईसाई आमतौर पर बैतलहम जाते हैं। वह पवित्र स्थल जहां ईसा मसीह का जन्म हुआ तथा गिरजाघर व उसके आस-पास की सारी जगह की देखभाल मुस्लिम करते हैं। वास्तव में गिरजाघर की चाबियां हर रात ईसाई उन्हें ही सौंपते हैं और सुबह उनसे वापस लेते हैं।
ऐसे में सवाल है कि अमिताभ बच्चन और शाहरुख खान को बड़ी संख्या में पसंद करने वाले बॉलीवुड प्रशंसक फिलिस्तीनियों का भारत के साथ और क्या संबंध है। भारत के सहयोग का जिक्र फिलिस्तीनी हमेशा करते हैं क्योंकि उसे मान्यता देने वाले गैर-मुस्लिम राष्ट्रों में भारत ही सबसे पहला था। कभी यासर अराफात इंदिरा गांधी को 'बहन' पुकारा करते थे तो आज प्रधानमंत्री मोदी का पूरी गर्मजोशी से राष्ट्रपति अब्बास स्वागत करते हैं।

गजब की कूटनीति का परिचय देते हुए प्रधानमंत्री मोदी पहले तो एकमात्र उदार मुस्लिम राष्ट्र जोर्डन (वास्तव में यह एकमात्र मुस्लिम राष्ट्र है जहां इसके राजा तथा रानी दोनों के पोट्रे्ट जगह-जगह लगे हुए हैं) पहुंचे। यात्रा के दूसरे चरण में मोदी यू.ए.ई. तथा सऊदी अरब के लीडरों से मिले। परंतु किसी भारतीय प्रधानमंत्री की इस पहली फिलिस्तीन यात्रा से कई संकेत मिल सकते हैं। इसराईल के साथ अच्छे संबंधों के बीच इसराईल-फिलिस्तीन विवाद में दो राष्ट्र सिद्धांत को मान्यता देना जबकि ट्रम्प द्वारा येरुशलम को इसराईल की राजधानी की मान्यता देने से इसका दर्जा एक-राष्ट्र नीति का हो गया था। दोनों पड़ोसियों के साथ अच्छे संबंध बनाए रखना परिपक्व विदेश नीति का संकेत है। यदि भारत मध्य-पूर्व की इस समस्या को हल करने में दिलचस्पी लेता है तो यह नीति एक सहायक व सक्रिय भूमिका के रूप में विकसित हो सकती है।

Announcemnet by INDIAN Prime Minister

रामल्ला में एक टैक्नोलॉजी पार्क प्रोजैक्ट निर्माण से लेकर फिलिस्तीनियों को नौकरियां देने जैसे विविध आ्थक पैकेज के अलावा प्रधानमंत्री ने वहां इंफ्रास्ट्रक्चर तथा अस्पताल बनाने का भी भरोसा दिया है। ये सभी कदम फिलिस्तीनियों के लिए महत्वपूर्ण होने के साथ-साथ दुनिया भर, विशेषकर पाकिस्तान तथा भारत के मुसलमानों के लिए एक महत्वपूर्ण संदेश भी हैं। अमेरिका, इसराईल तथा फिलिस्तीन के साथ दोस्ताना संबंधों से एक परिपक्व लोकतंत्र के रूप में भारत का दावा पुख्ता होता है। इसके अलावा इस प्रकार बनने वाली धर्मनिरपेक्ष छवि अगले चुनावों में सरकार के काम भी आ सकती है। अंतर्राष्ट्रीय मंचों तथा संयुक्त राष्ट्र में कश्मीर मुद्दा उठा कर भारत को मुस्लिम विरोधी प्रदर्शित करने का पाकिस्तान का खेल भी इससे थम सकता है।

What ails India's Middle East Policy

भारतीय नीति निर्माताओं के साथ शायद यह समस्या नहीं है कि वे सही कदम नहीं उठाते हैं बल्कि असली समस्या है कि उनके प्रयासों में निरंतरता का अभाव है। दक्षिण-पूर्व एशिया को लेकर भारत की ढुलमुल नीति के चलते ही उन देशों के साथ अच्छे संबंधों तथा उन्हें वित्तीय सहायताएं देने के बावजूद भारत वहां अपना प्रभाव स्थापित नहीं कर सका। इसी बात का लाभ उठाते हुए चीन ने इस क्षेत्र में अपना प्रभाव फैला लिया है। मध्य-पूर्व में मुस्लिम देशों के साथ अच्छे संबंधों की बदौलत व्यापार में लाभ के अलावा वह रूसी प्रभाव पर भी अंकुश लगा सकेगा जहां यूरोप की सक्रिय भूमिका के अभाव (ब्रैग्जिट तथा सत्ता परिवर्तनों की व्यस्तता की वजह से) में रूस-तुर्की-चीन की धुरी पैर जमाती जा रही है।

प्रधानमंत्री यू.ए.ई. में उप राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री तथा दुबई के शासक शेख मोहम्मद बिन राशिद अल मख्तूम, अबू धाबी के क्राऊन प्रिंस शेख मोहम्मद बिन जायद अल नाहयान से मिले। दुबई के वर्ल्ड गवर्नमैंट समिट को भी उन्होंने सम्बोधित किया जहां भारत एक मेहमान राष्ट्र था। इसके बाद मोदी ने आर्थिक तथा व्यापारिक संबंध मजबूत करने के लिए ओमान की यात्रा भी की। तेल की बढ़ती कीमतों के मद्देनजर खाड़ी के देशों से अच्छे संबंध रखना समाधान का एक रास्ता हो सकता है। 90 लाख से अधिक भारतीय खाड़ी देशों में काम करते तथा रहते हैं। इनमें से एक-तिहाई केवल यू.ए.ई. में ही हैं। स्पष्ट है कि भारत के लिए एक मजबूत मध्य-पूर्व नीति वक्त की जरूरत है।

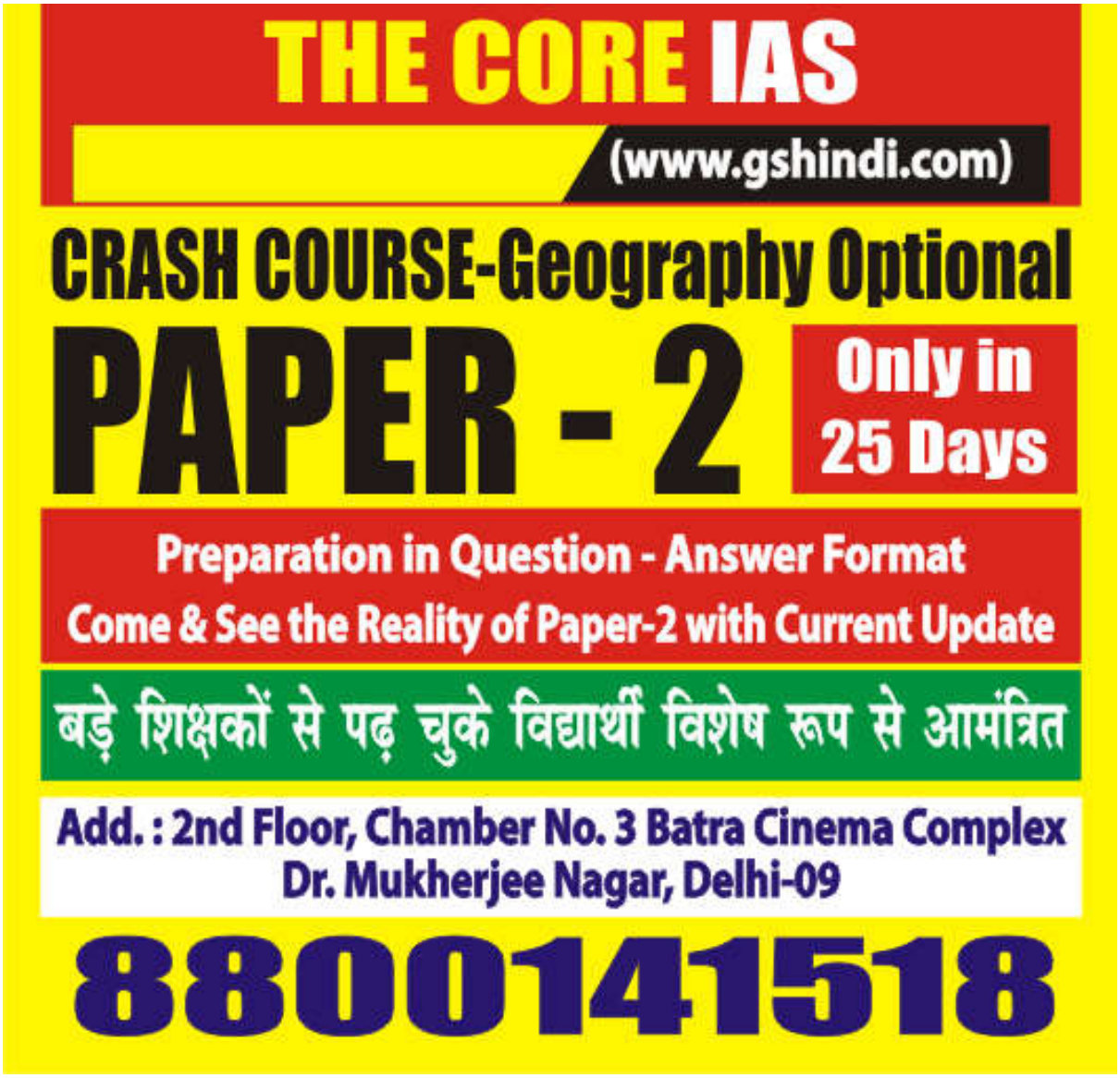

द. एशिया में भारत की नई भागीदारी

#Amar Ujala

दक्षिण एशिया में अफगानिस्तान से लेकर म्यांमार और हिंद महासागर में 2000 के दशक के मध्य से चीन की दखलंदाजी ने इस क्षेत्र में भारत के पारंपरिक वर्चस्व को खत्म कर दिया। इस पूरेउपमहाद्वीप में बीजिंग ने अपने भारी वित्तीय संसाधनों का निवेश किया और अपनी सामरिक ताकत विकसित की, तो नई दिल्ली को चीन के आक्रामक रवैये को रोकने के लिए भारी चुनौतियों का सामनाकरना पड़ा।
वर्ष 2014 में प्रधानमंत्री ने '**NeighbourhoodFirst**' की नई नीति घोषित की, जिसके परिणामस्वरूप इस क्षेत्र के अन्य देशों से भागीदारी के लिए पहुंच बढ़ाई गई। इस तरह भारत ने अपनी वहरणनीति बदली, जिस के तहत वह दक्षिण एशिया में अपना प्रभाव बनाए रखने की विफल कोशिशें करता था और इस क्षेत्र के बाहर के किसी देश को महत्व नहीं देना चाहता था। आधिकारिक तौर पर इनअभूतपूर्व प्रयास को समान विचारधारा वाले देशों के साथ भागीदारी बढ़ाने का कदम माना जाता है।

विदेश सचिव एस जयशंकर के अनुसार, ज्यादा 'लोक केंद्रित' संपर्क परियाजनाओं और 'सहकारी क्षेत्रीय ढांचे' के निर्माण के लिए भारत उन बहुत से देश के साथ घनिष्ठतापूर्वक काम कर रहा है,जिनका नजरिया

समान है। ऐसे कई उदाहरण हैं, जो भारत की क्षेत्रीय राजनीति में बदलाव के इन तत्वों की शिनाख्त करते हैं। अमेरिका के साथ-साथ भारत अब नेपाल, बांग्लादेश या श्रीलंका जैसे छोटे-छोटे देशों के साथ गहन परामर्श करता है। वाशिंगटन के साथ मिलकर काम करने की नई दिल्ली की व्यापक इच्छा की झलक मोदी के पिछले वर्ष के बयान में दिखी थी, जब उन्होंने कहा था किअफगानिस्तान में विकास के लिए हम समान विचारधारा वाले अन्य भागीदारों के साथ काम करने के इच्छुक हैं।

- वर्ष 2015 में मालाबार नौसैनिक अभ्यास में जापान के स्थायी रूप से शामिल होने के बाद टोक्यो और न ई दिल्ली ने संयुक्त रूप से विजन 2025 तैयार किया, जिसमें बेहतर क्षेत्रीय एकीकरण औरकनेक्टिविटी में सुधार (खासकर बंगाल की खाड़ी क्षेत्र में) के लिए द्विपक्षीय और अन्य सहयोगियों के साथ समन्वय की तलाश का वायदा किया गया है।
- वर्ष 2016 में एशिया-अफ्रीका ग्रोथ कॉरिडोर की घोषणा हुई, उसके बाद भारत ने चीन के 'वन बेल्ट वन रोड' पहल का विकल्प तैयार करने के लिए जापान के साथ काम करने की इच्छा जताई।
- • वर्ष 2014 में भारत और रूस ने तीसरी दुनिया के देशों, खासकर बांग्लादेश और श्रीलंका में परमाणु ऊर्जा के विकास के लिए एक समझौते पर हस्ताक्षर किया। वर्ष 2015 में पहली बार भारत के पूर्वीतट पर ऑस्ट्रेलिया-भारत का समुद्री अभ्यास हुआ। और ब्रिटेन के साथ भारत ने दक्षिण एशिया में विकास सहयोग के साथ तीसरी दुनिया के देशों में सहकारी भागीदारी के लिए एक समझौते परहस्ताक्षर किया, और क्षेत्रीय मामलों पर इसकी पहली औपचारिक वार्ता 2016 में हुई।
- ब्रसेल्स, पेरिस और बर्लिन के साथ भारत ने हिंद महासागर क्षेत्र में समुद्री सुरक्षा पर बातचीत की है और क्षेत्रीय आतंकवाद- विरोधी प्रयासों को मजबूत करने के लिए खुफिया जानकारियां साझा कररहा है। इस क्षेत्र में बहुपक्षीय संगठनों को शामिल करने की अपनी पिछली अनिच्छा के विपरीत अंततः भारत ने उत्साहपूर्वक 2016-25 के लिए एशियाई विकास बैंक के दक्षिण एशिया उप क्षेत्रीयआर्थिक सहयोग संचालन कार्यक्रम का समर्थन किया और इस महाद्वीप तथा दक्षिण पूर्व एशिया में संपर्क बढ़ाने पर ध्यान केंद्रित किया।

हालांकि इन भागीदारों में से कई अभी उभर रहे हैं, लेकिन ऐसे कई उपाय हैं, जो उन्हें तीनों क्रमिक स्तरों पर विस्तार की अनुमति देंगे। सबसे पहले, नई दिल्ली और इस क्षेत्र से बाहर की ताकत कोदक्षिण एशिया में तरक्की और साझेदारी की चर्चा और आकलन के लिए विशेष रूप से समर्पित नए संस्थागत ढांचों का विकास करने में निवेश करना चाहिए। मौजूदा क्षेत्रीय परामर्श के तहत नेपाल औरश्रीलंका के मुद्दे अक्सर अफगानिस्तान, पाकिस्तान या व्यापक एशियाई मुद्दों के नीचे दब जाते हैं। इन तीन विशिष्ट क्षेत्रीय मार्गों पर विशिष्ट द्विपक्षीय वार्ता के लिए रास्ता बनाना चाहिए-चीन को ध्यान मेंरखते हुए आतंकवाद-विरोध और समुद्री सुरक्षा के साथ राजनीतिक एवं रणनीतिक मुद्दे, संपर्क, व्यापार और निवेश पहल पर ध्यान देते हुए आर्थिक मुद्दे और सहायता परियोजनाओं व अन्य आर्थिकसहायता पहल पर ध्यान केंद्रित करते हुए विकासात्मक मुद्दे। दूसरे स्तर पर, समन्वय की संभावना बढ़ाने के लिए भारत और उसके भागीदार दक्षिण एशिया में नीतिगत तालमेल के लिए द्विपक्षीय क्षेत्रों कीपहचान कर सकते हैं, प्रत्येक पक्ष के तुलनात्मक लाभ को अधिकतम करने के लिए श्रम विभाजन पर सहमत हो सकते हैं। तीसरे और सबसे उच्च स्तर पर, चीन को रोकने और दक्षिण एशिया में अग्रिमठोस सहयोग के लिए भारत और उसके क्षेत्र से बाहर के भागीदार को संयुक्त परियोजनाओं को एकीकृत और कार्यान्वित करने की आकांक्षा रखनी चाहिए। इसके लिए भारत-अमेरिका-अफगानिस्तानकी तर्ज पर द्विपक्षीय वार्ता में तीसरे देश को शामिल करने की जरूरत होगी।

भारत और उसके क्षेत्र से बाहर के सहयोगियों को चुनौतियों का सामना करने के लिए भी तैयार रहना चाहिए। सबसे पहले तो भारत के इस क्षेत्र से बाहर के सहयोगी को निरंतर इस क्षेत्र में भारत कोप्रमुख भूमिका सौंपनी होगी और अपनी सुरक्षा चिंताओं को अलग रखना होगा। दूसरी बात, जिस तरह से इस क्षेत्र

के छोटे देश चीन के खिलाफ भारत और उसके सहयोगी के साथ खेल खेलते हैं, वैसे मेंउनसे घनिष्ठ संपर्क और तालमेल महत्वपूर्ण है। और अंत में , जब लोकतंत्र और मानवाधिकार की बात आएगी, तो नई दिल्ली और उसके दोस्तों को अपनी भिन्न प्राथमिकताओं के चलते सामयिक तनावका सामना करना पड़ेगा। इस तरह की चुनौती अभी म्यांमार में देखी जा रही है, जहां रोहिंग्या शरणार्थी के मुद्दे पर भारत और पश्चिमी देशों का रुख अलग-अलग है

3 **खाड़ी देशों में भारत का बढ़ता कद**

पश्चिम एशिया के तीन देशों की यात्रा पूरी कर प्रधानमंत्री भारत लौट चुके हैं। उनके इस दौरे को पश्चिम एशिया में भारत के बढ़ते कद के रूप में देखा जा रहा है। यह गलत भी नहीं है। एक तरफ प्रधानमंत्री ने पूर्वी एशियाई देशों के साथ 'एक्ट ईस्ट पॉलिसी' के तहत संबंधों को नई गरमाहट दी है, तो दूसरी तरफ पश्चिम एशिया पर भी बराबर की नजर रखी है। इसकी तस्दीक इससे भी होती है कि इस साल 26 जनवरी को बतौर मुख्य अतिथि आसियान के शासनाध्यक्ष भारत आए, तो पिछले साल अबू धाबी के युवराज मोहम्मद बिन जायद अल नाहयान राजपथ पर मौजूद थे। हाल-फिलहाल इजरायल के प्रधानमंत्री बेंजामिन नेतन्याहू की भी भारत यात्रा हुई थी। साफ है, पश्चिम एशिया व खाड़ी के देशों को लेकर भारत अपनी विदेश नीति को नई गति दे रहा है।

Why this was required: West ASIA Policy

ऐसा किया जाना जरूरी भी है। यह हमारे हित में है और अमन-पसंद देशों के हक में भी।
¬ इसकी पहली वजह तो यह है कि अफगानिस्तान आतंकी वारदातों से वक्त-बेवक्त अस्थिर होता रहा है और पहली बार अमेरिका ने वहां भारत की भूमिका को मान्यता दी है। ऐसे में, खाड़ी के देशों में शांति व संतुलन साधने से हमारा वैश्विक कद ऊंचा उठेगा। इस दिशा में हम आगे बढ़े भी हैं। भारत, ईरान और अफगानिस्तान के बीच एक त्रिपक्षीय समझौता हुआ है, जिसकी महत्वपूर्ण धुरी चाबहार बंदरगाह है। इतना ही नहीं, भारत सरकार की कोशिश यही रही है कि संयुक्त अरब अमीरात (यूएई) के साथ सामरिक साझेदारी आगे बढ़े। प्रधानमंत्री मोदी की यह यूएई यात्रा इसी कड़ी का हिस्सा थी। इस्लामी देशों में जो नए समीकरण बन रहे हैं, उसमें भी यह आवश्यक है कि भारत और यूएई की दोस्ती नया मुकाम हासिल करे।
¬ रही बात ओमान की, तो वह हमारा पुराना दोस्त रहा है। इसका पता इससे भी चलता है कि ओमान में 300 साल पहले एक शिव मंदिर बना था, जो गुजरात से गए भारतीयों ने बनाया था। मगर प्रधानमंत्री की यात्रा सिर्फ पुराने रिश्तों की वजह से 'लंबे समय तक याद रखा जाने वाला' दौरा नहीं है। असल में इंडो-पैसिफिक क्षेत्र में जिस तरह से भारत की भूमिका को सराहना मिली है और प्रशांत महासागर में चीन का दखल बढ़ा है, उसे देखते हुए यह देश भारत का महत्वपूर्ण मित्र साबित हो सकता है। इसीलिए वापस लौटकर प्रधानमंत्री मोदी ने अपने ट्वीट में ओमान से 'व्यापार और निवेश समेत सभी क्षेत्रों में संबंधों में उल्लेखनीय गति' मिलने का भरोसा जताया है। जिस तरह के रक्षा समझौते वहां हुए हैं, उनसे मुमकिन है कि आने वाले दिनों में हमें ओमान की नौसैन्य सुविधा भी हासिल हो।

¬ प्रधानमंत्री की इस यात्रा में जिस देश पर सबसे ज्यादा नजर थी, वह था फलस्तीन। फलस्तीन विवाद एक ऐसा मसला है, जिससे पश्चिम एशिया लगातार जूझता रहा है। इसने वहां जंगी माहौल तक बनाया है। हालांकि संयुक्त राष्ट्र ने अपने एक प्रस्ताव में 'टू स्टेट सॉल्यूशन' (द्वि-राष्ट्र समाधान) की व्यवस्था की है, पर यह रास्ता भी अब तक मंजिल नहीं पा सका है। ऐसे में, भारत के आगे बढ़ने से इस मसले का समाधान हो सकता है। भारत कितना प्रभावी हो सकता है, प्रधानमंत्री मोदी के रामल्ला जाने के लिए जॉर्डन की सरकार का हेलीकॉप्टर देना और सुरक्षा का जिम्मा इजरायली वायु सेना द्वारा निभाना इसका नमूना मात्र है। फलस्तीन के साथ हमारे अरसे से नजदीकी रिश्ते रहे हैं। संभवत: इसीलिए प्रधानमंत्री मोदी के फलस्तीन पहुंचने से पहले ही राष्ट्रपति महमूद अब्बास ने कहा कि भारत इस मसले को हल करने में अपनी भागीदारी

निभाए।

भारत की तरफ उम्मीद भरी नजरों से देखने की वजह भी है। अभी पश्चिम एशिया एक नए माहौल से गुजर रहा है। अमेरिका ने अपने पत्ते खोल दिए हैं और यरुशलम को इजरायल की राजधानी के रूप में मान्यता दे दी है। जबकि पहले यही माना जाता था कि अमेरिका भी 'टू स्टेट सॉल्यूशन' का हिमायती है। अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप की घोषणा से अरब देशों में हलचल स्वाभाविक थी। मुश्किल यह भी है कि अरब देशों का भरोसा ईरान से डिगा हुआ है। लिहाजा वे चाहते हैं कि किसी तरह इजरायल को साथ लेकर फलस्तीन से विवाद निपटा लिया जाए। चूंकि इजरायल व फलस्तीन, दोनों देशों में भारत को पर्याप्त सम्मान मिलता रहा है, इसलिए प्रधानमंत्री मोदी की पहल बिल्कुल सटीक समय पर सामने आई है। फलस्तीन पहुंचने वाले मोदी भारत के पहले प्रधानमंत्री हैं। उनका दौरा यह भी तस्दीक करता है कि भारत अब नेतृत्व की भूमिका में आगे बढ़ चुका है। अब तक तो यही होता रहा है कि ऐसे मसलों पर भारत तटस्थ रहता था और गुटनिरपेक्ष आंदोलन के मंच से हल निकालने को उत्सुक रहता था। मगर अब ऐसा लग रहा है कि भारत अपने बूते दुनिया भर में समर्थन जुटाने में सक्षम है। विवादित मसलों पर वह अपनी राय खुलकर जाहिर करने लगा है। इसका मतलब यह नहीं कि गुटनिरपेक्ष देशों के मंच को हमने किनारे कर दिया है। उसे तो अब भी पर्याप्त तवज्जो दी जा रही है। मगर नरेंद्र मोदी की ताजा यात्रा बता रही है कि भारत अब अगुवा की भूमिका में आने को तैयार है।

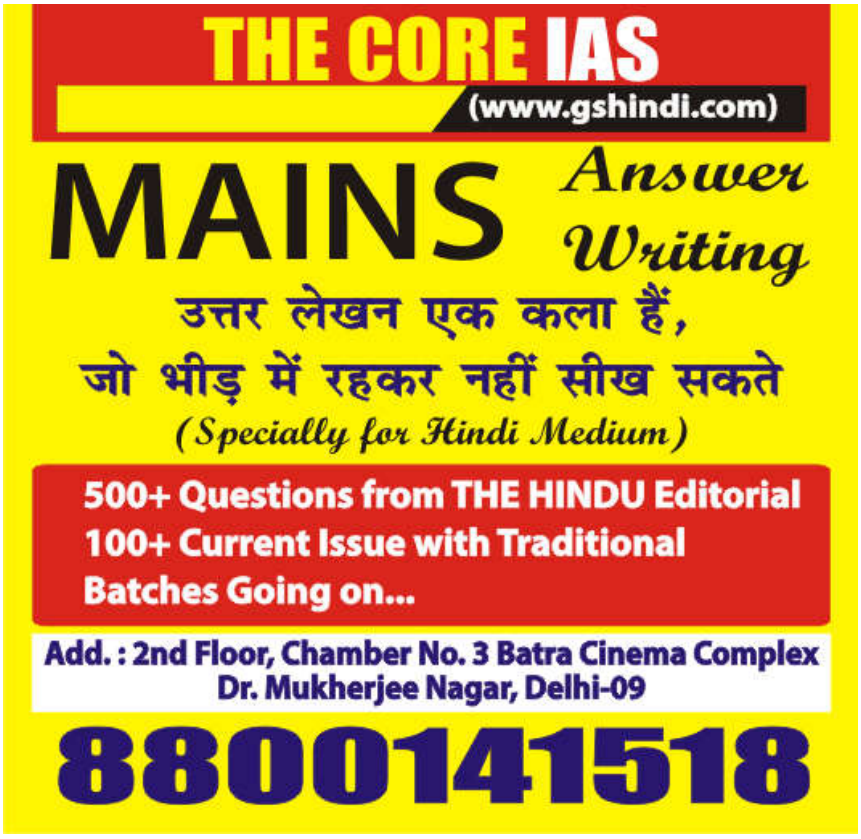

हालांकि फलस्तीन मसले का हल इतना आसान भी नहीं। जिस किसी देश ने इसमें हाथ डाला है, उसके हाथ झुलसे ही हैं। लिहाजा भारत को भी संभलकर आगे बढ़ना होगा। हमारे हक में एक बात और है। कई देश चाहते हैं कि भारत इस भूमिका में सामने आए। यानी भारत ने अपने तईं प्रयास किया, तो उसे अन्य मुल्क भी हाथोंहाथ लेंगे। इस समर्थन का एक पक्ष आतंकवाद भी है। दुनिया भर में यह एक बड़ी चुनौती बनकर उभरा है। चूंकि इससे निपटने का नई दिल्ली के पास करीबी व गहरा अनुभव है, और इसके लिए हमारी सराहना होती रही है, इसलिए संभव है कि आतंकवाद के खिलाफ जंग में भी भारत वैश्विक मंचों पर खास भूमिका में नजर आए। अब देखना सिर्फ इतना है कि भारत कितनी मजबूती के साथ आगे बढ़ता है? हालांकि अच्छी बात है कि हमारी सरकार इन तमाम पहलुओं को समझ रही है और इस मोर्चे पर खरी भी उतर रही है।

IRAN

1. ईरान के साथ संबंधों में भारत के लिए जितनी संभावनाएं हैं, उतनी ही चुनौतियां भी हैं

Recent agreements with Iran

पिछले हफ्ते ईरान के राष्ट्रपति हसन रूहानी की भारत यात्रा के दौरान दोनों देशों के बीच कई समझौते हुए हैं. इनमें भारत की मदद से बन रहे चाबहार बंदरगाह को लेकर जो समझौता हुआ है उसे काफी अहम माना जा रहा है. इसके तहत भारत को डेढ़ साल के लिए बंदरगाह का एक हिस्सा लीज़ पर दिया गया है. इससे नई दिल्ली को अपने पड़ोसी देशों और उनके जरिए दुनिया के एक बड़े हिस्से तक पहुंच बनाने में काफी मदद मिलेगी.

- इसमें कोई दोराय नहीं कि चाबहार के जरिए तैयार हुआ माल-ढुलाई का गलियारा इस पूरे क्षेत्र की भौगोलिक-आर्थिक-सामरिक स्थिति बदलने वाला है.
- पाकिस्तान द्वारा अफगानिस्तान और मध्य एशिया तक भारत को जमीनी मार्ग न दिए जाने की वजह से नई दिल्ली के लिए ईरान स्वाभाविक विकल्प था. हालांकि इस दिशा में कारगर तरीके से आगे बढ़ने में काफी वक्त लग गया. यह 2003 की बात है जब ईरान के राष्ट्रपति मोहम्मद खातमी भारत की गणतंत्र दिवस परेड के मुख्य अतिथि बने थे और उसी समय चाबहार बंदरगाह के विकास पर सहमति बनी थी.

इस बीच चीन ने पाकिस्तान के मकरान में स्थिति ग्वादर बंदरगाह को तेजी से विकसित कर दिया है. जबकि यूपीए सरकार चाबहार के विकास में जरूरी तेजी नहीं दिखा पाई. अगर ईरान के साथ इस परियोजना में तेजी आई है तो इसका ज्यादातर श्रेय प्रधानमंत्री और राजमार्ग और परिवहन मंत्री को जाता है. इन्होंने न सिर्फ ईरान सरकार के साथ बातचीत को आगे बढ़ाया बल्कि परियोजना से जुड़ी प्रशासनिक बाधाओं को भी दूर किया.

चाबहार बंदरगाह की आर्थिक और सामरिक उपयोगिता तब सबकी नजरों में आई थी जब बीते दिसंबर में भारत ने यहां से हजारों टन गेहूं अफगानिस्तान भेजा था. रूहानी की यात्रा के दौरान भारत ने प्रतिबद्धता जताई है कि वह जाहेदान तक रेलवे लाइन के निर्माण में भी तेजी लाएगा. ईरान का यह शहर पाकिस्तान और अफगानिस्तान सीमा पर स्थित है. ईरान बंदरगाह के पास चाबहार विशेष आर्थिक क्षेत्र का भी विकास कर रहा है और रूहानी भारतीय कंपनियों को वहां निवेश के लिए आमंत्रित किया है.

प्रधानमंत्री 2016 में तेहरान गए थे और तब भारत, ईरान और अफगानिस्तान के बीच त्रिपक्षीय आवाजाही मार्ग विकसित करने के समझौते पर हस्ताक्षर हुए थे. नई दिल्ली और तेहरान चाबहार बंदरगाह को अंतरराष्ट्रीय उत्तर-दक्षिण परिवहन गलियारा (INSTC) से जोड़ना चाहते हैं. INSTC भारत, ईरान और रूस के साथ-साथ मध्य एशियाई देशों और यूरोप को जोड़ने वाला एक व्यापारिक मार्ग है जिसमें जल परिवहन, रेल और सड़क परिवहन शामिल हैं.

Goldan door

इसलिए हैरानी की बात नहीं कि मोदी ने रूहानी की यात्रा के दौरान चाबहार को मध्य एशिया तक पहुंचने के लिए भारत का 'स्वर्णिम दरवाजा' कहा था. कुल मिलाकर भारत के लिए यह एक बड़ी उपलब्धि है, लेकिन नई दिल्ली का ईरान के साथ संबंधों से जुड़ी आशंकाओं पर भी ध्यान होगा.

बीते कुछ महीनों से परमाणु समझौते को लेकर अमेरिका और ईरान के बीच तनातनी चल रही है. अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप कई बार चेतावनी दे चुके हैं कि वे ईरान पर पाबंदियां लगा सकते हैं. जाहिर है कि इन चेतावनियों का असर भारत और ईरान के बीच कारोबारी संबंधों पर भी दिख सकता है. हालांकि हसन रूहानी की यात्रा के दौरान भारत ने यह कहकर सही रुख ही अपनाया है कि वह अमेरिका-ईरान परमाणु समझौते को पूरी तरह लागू करने के पक्ष में है.

हालांकि ईरान के साथ संबंधों में मुश्किल सिर्फ यही नहीं है. तेहरान के सुन्नी बहुल अरब देशों के साथ-साथ इजरायल के साथ भी तनावभरे संबंध हैं, जबकि ये देश पहले के मुकाबले आज भारत के कहीं ज्यादा करीब हैं. वहीं अफगानिस्तान में भले ही नई दिल्ली और तेहरान परंपरागत रूप से मिलकर काम कर रहे हैं, लेकिन यहां ईरान का तालिबान को समर्थन सवालों के घेरे में है.

ईरान मध्य-पूर्व एशिया में स्थित है और अंतरराष्ट्रीय राजनीति के हिसाब से यहां मौजूद देशों के साथ संबंध रखना हमेशा जटिलताओं से भरा रहा है. फिर भी नई दिल्ली को अब बड़े-बड़े देशों की तरह यहां राजनीति को व्यवहारिक नजरिये से देखना होगा

Recent agreements with Iran

पिछले हफ्ते ईरान के राष्ट्रपति हसन रूहानी की भारत यात्रा के दौरान दोनों देशों के बीच कई समझौते हुए हैं. इनमें भारत की मदद से बन रहे चाबहार बंदरगाह को लेकर जो समझौता हुआ है उसे काफी अहम माना जा रहा है. इसके तहत भारत को डेढ़ साल के लिए बंदरगाह का एक हिस्सा लीज़ पर दिया गया है. इससे नई दिल्ली को अपने पड़ोसी देशों और उनके जरिए दुनिया के एक बड़े हिस्से तक पहुंच बनाने में काफी मदद मिलेगी.

- इसमें कोई दोराय नहीं कि चाबहार के जरिए तैयार हुआ माल-ढुलाई का गलियारा इस पूरे क्षेत्र की भौगोलिक-आर्थिक-सामरिक स्थिति बदलने वाला है.
- पाकिस्तान द्वारा अफगानिस्तान और मध्य एशिया तक भारत को जमीनी मार्ग न दिए जाने की वजह से नई दिल्ली के लिए ईरान स्वाभाविक विकल्प था. हालांकि इस दिशा में कारगर तरीके से आगे बढ़ने में काफी वक्त लग गया. यह 2003 की बात है जब ईरान के राष्ट्रपति मोहम्मद खातमी भारत की गणतंत्र दिवस परेड के मुख्य अतिथि बने थे और उसी समय चाबहार बंदरगाह के विकास पर सहमति बनी थी.

इस बीच चीन ने पाकिस्तान के मकरान में स्थिति ग्वादर बंदरगाह को तेजी से विकसित कर दिया है. जबकि यूपीए सरकार चाबहार के विकास में जरूरी तेजी नहीं दिखा पाई. अगर ईरान के साथ इस परियोजना में तेजी आई है तो इसका ज्यादातर श्रेय प्रधानमंत्री और राजमार्ग और परिवहन मंत्री को जाता है. इन्होंने न सिर्फ ईरान सरकार के साथ बातचीत को आगे बढ़ाया बल्कि परियोजना से जुड़ी प्रशासनिक बाधाओं को भी दूर किया.

चाबहार बंदरगाह की आर्थिक और सामरिक उपयोगिता तब सबकी नजरों में आई थी जब बीते दिसंबर में भारत ने यहां से हजारों टन गेहूं अफगानिस्तान भेजा था. रूहानी की यात्रा के दौरान भारत ने प्रतिबद्धता जताई है कि वह जाहेदान तक रेलवे लाइन के निर्माण में भी तेजी लाएगा. ईरान का यह शहर पाकिस्तान और अफगानिस्तान सीमा पर स्थित है. ईरान बंदरगाह के पास चाबहार विशेष आर्थिक क्षेत्र का भी विकास कर रहा है और रूहानी भारतीय कंपनियों को वहां निवेश के लिए आमंत्रित किया है.

प्रधानमंत्री 2016 में तेहरान गए थे और तब भारत, ईरान और अफगानिस्तान के बीच त्रिपक्षीय आवाजाही मार्ग विकसित करने के समझौते पर हस्ताक्षर हुए थे. नई दिल्ली और तेहरान चाबहार बंदरगाह को अंतरराष्ट्रीय उत्तर-दक्षिण परिवहन गलियारा (INSTC) से जोड़ना चाहते हैं. INSTC भारत, ईरान और रूस के साथ-साथ मध्य एशियाई देशों और यूरोप को जोड़ने वाला एक व्यापारिक मार्ग है जिसमें जल परिवहन, रेल और सड़क परिवहन शामिल हैं.

Goldan door

इसलिए हैरानी की बात नहीं कि मोदी ने रूहानी की यात्रा के दौरान चाबहार को मध्य एशिया तक पहुंचने के लिए भारत का 'स्वर्णिम दरवाजा' कहा था. कुल मिलाकर भारत के लिए यह एक बड़ी उपलब्धि है, लेकिन नई दिल्ली का ईरान के साथ संबंधों से जुड़ी आशंकाओं पर भी ध्यान होगा.

बीते कुछ महीनों से परमाणु समझौते को लेकर अमेरिका और ईरान के बीच तनातनी चल रही है. अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप कई बार चेतावनी दे चुके हैं कि वे ईरान पर पाबंदियां लगा सकते हैं. जाहिर है कि इन चेतावनियों का असर भारत और ईरान के बीच कारोबारी संबंधों पर भी दिख सकता है. हालांकि हसन रूहानी की यात्रा के दौरान भारत ने यह कहकर सही रुख ही अपनाया है कि वह अमेरिका-ईरान परमाणु समझौते को पूरी तरह लागू करने के पक्ष में है.

हालांकि ईरान के साथ संबंधों में मुश्किल सिर्फ यही नहीं है. तेहरान के सुन्नी बहुल अरब देशों के साथ-साथ इजरायल के साथ भी तनावभरे संबंध हैं, जबकि ये देश पहले के मुकाबले आज भारत के कहीं ज्यादा करीब हैं. वहीं अफगानिस्तान में भले ही नई दिल्ली और तेहरान परंपरागत रूप से मिलकर काम कर रहे हैं, लेकिन यहां ईरान का तालिबान को समर्थन सवालों के घेरे में है.

ईरान मध्य-पूर्व एशिया में स्थित है और अंतरराष्ट्रीय राजनीति के हिसाब से यहां मौजूद देशों के साथ संबंध रखना हमेशा जटिलताओं से भरा रहा है. फिर भी नई दिल्ली को अब बड़े-बड़े देशों की तरह यहां राजनीति को व्यवहारिक नजरिये से देखना होगा

2. INDIA IRAN & Recent visit of हसन रूहानी

IRAN के राष्ट्रपति हसन रूहानी की तीन दिवसीय भारत यात्रा दोनों देशों के बीच कारोबारी लिहाज से भी अहम थी और कूटनीतिक नजरिए से भी। उनके साथ आए प्रतिनिधिमंडल में ईरान के कई दिग्गज कारोबारी भी थे। दरअसल, ईरान इस वक्त कई कारणों से भारत से व्यापारिक लेन-देन बढ़ाना चाहता है।

Why India important for Iran

¬ सकल घरेलू उत्पाद की दर और सकल पूंजी निर्माण की दर में आई कमी के चलते ईरान सरकार अपने यहां जन-असंतोष का सामना कर रही है। हाल में ईरान के कई शहरों में हुए विरोध-प्रदर्शनों ने उसे चिंता में डाल रखा है। ऐसे वक्त में रूहानी को उम्मीद होगी कि अपने तेल और गैस संसाधनों का उपयोग वे अतिरिक्त पूंजी जुटाने, अपने यहां विदेशी निवेश बढ़ाने और रोजगार के नए अवसर सृजित करने में कर सकते हैं।
¬ अमेरिका की तरफ से लगाए गए प्रतिबंधों के चलते ईरान एक बार फिर अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मुश्किलों से गुजर रहा है। उसे विदेश व्यापार में भी कठिनाई हो रही है। ऐसे वक्त में भारत से रिश्ते बेहतर होते हैं और लेन-देन बढ़ता है तो ईरान के लिए यह राहत की बात होगी। भारत से व्यापार में ईरान की बढ़ी हुई दिलचस्पी इससे भी जाहिर होती है कि उसने भारत को अपने यहां ढांचागत और यातायात परियोजनाओं में रुपए में निवेश करने की छूट दे रखी है। ईरान यह भी चाहता है कि अफगानिस्तान सीमा पर भारत रेल लाइन बिछाए।

Why Iran needed India

¬ दूसरी ओर, भारत को भी कई वजहों से ईरान के सहयोग की जरूरत है।
¬ चाबहार बंदरगाह के जरिए भारत पाकिस्तान को नजरअंदाज कर अफगानिस्तान तक पहुंच का रास्ता तो पा ही लेगा, मध्य एशिया के देशों तक भी व्यापारिक आवाजाही कर सकेगा।

¬ फिर, ईरान के पास तेल और गैस का प्रचुर भंडार है, और रूहानी ने अपने गैस फील्ड में भारत को निवेश करने की पेशकश भी की है। जहां तक रूहानी की यात्रा के कूटनीतिक महत्त्व का सवाल है, यह दोनों देशों के लिए बराबर है।

¬ इजराइल के प्रधानमंत्री बेंजामिन नेतन्याहू की भारत यात्रा के कोई महीने भर बाद ईरान के राष्ट्रपति के आगमन से मोदी सरकार ने पश्चिम एशिया में संतुलन साधने की कोशिश की है। यह माना जा रहा था कि ईरान के प्रति ट्रंप के रुख को देखते हुए ईरान से कारोबार बढ़ाने में भारत को परेशानी या हिचक हो सकती है। लेकिन यह आशंका निराधार साबित हुई। अमेरिका ने साफ कर दिया है कि वह भारत और ईरान के व्यापारिक मामलों में आड़े नहीं आएगा।

एक समय ईरान से पाकिस्तान होकर भारत आने वाली पाइपलाइन परियोजना की बड़ी चर्चा थी, पर यह महत्त्वाकांक्षी परियोजना कभी सिरे नहीं चढ़ पाई। जबकि चाबहार परियोजना की एक बड़ी खासियत यही है कि भारत से अफगानिस्तान जाने वाले माल को पाकिस्तान होकर नहीं जाना पड़ेगा। बहरहाल, रूहानी और प्रधानमंत्री मोदी के बीच चाबहार परियोजना के आगे के क्रियान्वयन से लेकर ईरान के तेल और गैस क्षेत्र में भारत के पूंजीनिवेश की संभावना सहित कई मोर्चों पर आपसी सहयोग बढ़ाने पर बातचीत हुई। दोनों नेताओं ने साझा बयान भी दिए। इस मौके पर दोनों देशों के बीच नौ करार हुए, जो चाबहार और शाहिद बहेस्ती बंदरगाह के अलावा दोहरे कराधान से बचाव, राजनयिक पासपोर्ट धारकों को वीजा से छूट देने, प्रत्यर्पण संधि की पुष्टि तथा दवा और कृषि आदि में आपसी सहयोग से संबंधित हैं।

राष्ट्रपति अपनी पहली विदेश यात्रा पर इसी सप्ताह अफ्रीका जा रहे हैं। सरकार ने गंतव्य के रूप में जिबूती और इथियोपिया का चयन कर सही फैसला लिया है। विदेश मंत्रालय के अनुसार, राष्ट्रपति कीपहली विदेश यात्रा के लिए अफ्रीका का चयन, वर्तमान सरकार की नजर में इस महाद्वीप के महत्व को दर्शाता है। मोदी सरकार अफ्रीका को अपने हित-विस्तार के एक क्षेत्र के रूप में देखती रही है औरवहां अपनी मजबूत मौजूदगी को उत्सुक है। अफ्रीका यानी एक ऐसा महाद्वीप, जिसके साथ भारत के रिश्तों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि है और जहां आज हर प्रमुख शक्ति अपना प्रभाव जमाने के लिए दांवलगाना चाह रही है।

Importance of Djibouti

- जिबूती हिंद महासागर क्षेत्र में एक प्रमुख देश बनकर उभर रहा है। इसका भौगोलिक दायरा भी महत्वपूर्ण है।
- देश से बाहर चीन का पहला सैन्य अड्डा यहीं है, और इस रूप में जिबूती के नौसैनिक बेस ने दुनिया भर में तरह-तरह की प्रतिक्रियाओं को भी मौका दिया।
- इस नौसैनिक अड्डे को चीन की अपनी ही विदेश नीति की सीमाओं के विस्तार के तौर पर देखा जाता है। यह अफ्रीका में उसकी बढ़ती सैन्य ताकत का भी प्रतीक है।
- चीनी विदेश मंत्री वांग यी की 2016 की एक प्रेस कॉन्फ्रेंस पर गौर करें, तो अफ्रीका में यह नया सैन्य अ भियान 'अंतरराष्ट्रीय और क्षेत्रीय मुद्दों के राजनीतिक समाधान की दिशा में उसकी रचनात्मकभूमिका नि भाने की इच्छा का हिस्सा है, ताकि विदेशों में चीन की संभावनाओं के विस्तार के लिए अधिक उपयुक्त और सुरक्षित माहौल तैयार हो सके। वह और ज्यादा अंतरराष्ट्रीय सुरक्षा जिम्मेदारियोंका वहन कर सके।'

दरअसल, अफ्रीका में चीन की बढ़ती सैन्य महत्वाकांक्षा, महाद्वीप में उसके अपने आर्थिक आधार का ही वि स्तार है। यह अपने वैश्विक हितों की अत्यंत महत्वाकांक्षी और विस्तारित परिभाषा की ओरबढ़ना भी है। अ फ्रीका में इसके व्यवसाय को विदेशों में बढ़ते इसके सैन्य प्रभाव सहित उसके इन्हीं हितों को हासिल करने का नया तंत्र विकसित करने के तौर पर देखा जाना चाहिए।

India & Djibouti

- जिबूती अपनी जमीन पर भारत की मौजूदगी को लेकर सदैव उत्साहित रहा है और इसका स्वागत करता है। 2015 में येमन से निकलने के समय में भारत को इससे खासी मदद मिली थी।
- इथियोपिया के साथ भारत के पारंपरिक रिश्ते रहे हैं और भारत से उसे आज भी खासी रियायती मदद मिल रही है। अफ्रीका में भारत की मजबूत उपस्थिति के लिए ये दोनों देश खासे महत्वपूर्णसाधन हैं।
- 2015 के भारत-
  अफ्रीका शिखर सम्मेलन के साथ ही सरकार ने अफ्रीका के साथ सदियों पुराने संबंधों में तेजी लाने के लि ए तत्परता का संकेत दिया था। ऐसे संबंध, जो दोनों देशों के लाखों प्रवासियोंके जरिये परवान चढ़ते हैं।
- साझा औपनिवेशिक विरासत और स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद की विकास-यात्रा के अनुभवों ने भारत-अफ्रीका संबंधों को नए आधार दिए हैं। 1947 में आजादी हासिल करने के बाद भारत कीउपनिवेशवाद और नस्लभेद विरोधी छवि ने इन रिश्तों को काफी मजबूती दी और यह स्वाभाविक रूप से अफ्रीकी रा ष्ट्रों के करीब आ गया।
- शीत युद्ध के खात्मे के बाद से और अफ्रीका में चीन की बढ़ती उपस्थिति के मद्देनजर भारत अफ्रीकी महा द्वीप के साथ अपने संबंधों को फिर से परिभाषित करते हुए और मजबूती देना चाह रहा है।

Importance of Africa for Bharat

- विगत भारत-अफ्रीका शिखर सम्मेलन में दोनों देशों के बीच आपसी सहयोग के स्वरूप पर बनी सहमति और अफ्रीका में निवेश व सहायता बढ़ाने की भारतीय पहल, नई दिल्ली और अफ्रीकीमहाद्वीप के बीच मजबूत साझेदारी बढ़ाने के भारत के इरादे को दर्शाने वाली थी।
- • अब अफ्रीका में भारत के हित खासे बढ़े हुए हैं। विश्व के चंद तेजी से बढ़ते देशों के साथ ही अफ्रीका अब अतीत का 'अंधेरे में डूबा महाद्वीप' नहीं है। क्षेत्रीय देशों की जरूरतें अलग होती हैं, हितअलग होते हैं, तो उनकी ताकत भी अलग होती है।
- बीते कुछ दशकों में भारत का ध्यान भी महाद्वीप में बड़े पैमाने पर अपनी क्षमता-विस्तार पर गया है। भारतीय तकनीकी और आर्थिक सहयोग कार्यक्रम (आईटीईसी) के अंतर्गत इसने इस दिशा मेंबड़ा सहयोग दिया है। • 40 देशों में फैली 137 परियोजनाओं पर अफ्रीका के बुनियादी ढांचे के विकास के लिए इसने 7.5 अरब डॉलर के सहयोग का वादा किया है। भारत ने कम विकसित अफ्रीकी देशों के लिए अपने यहांशुल्क मुक्त बाजार सुलभ कराने की भी पेशकश की है, लेकिन सच यह है कि अफ्रीका के साथ भारत का व्यापार क्षमता से कहीं अधिक कम है। भारत, इस क्षेत्र में आर्थिक संबंधों का नया अध्यायशुरू करने के लिए अफ्रीका से 'विकासमूलक साझेदारी' चाहता है। ऐसा करके वह आर्थिक सहयोग और विकास संगठन के सदस्य देशों में अपनी अलग छवि दिखाना चाहेगा, जो समय की मांग भीहै।
- अफ्रीका में तेल क्षेत्र को सुरक्षित रखने के लिए वित्तीय और सैन्य सहायता का इस्तेमाल करने की बीजिंग की नीति दिल्ली को निराश करने वाली है। अपनी-अपनी अर्थव्यवस्थाओं को बढ़ावा देने केलिए संसाधनों और ऊर्जा के लिए चीन और भारत की जबरदस्त प्रतिस्पद्र्धा को 19वीं शताब्दी में अफ्रीका के लिए यूरोपीय देशों के बीच मची तथाकथित हलचल से जोड़कर देखा गया।

दरअसल कहने को तो यह एक प्रतिस्पद्र्धा ही है, क्योंकि अफ्रीका में भारत की स्थिति, चीन से काफी पीछे है। सच तो यही है कि जहां सरकारी तंत्र के विभिन्न स्तरों पर चीन की समन्वित मौजूदगीदेखी जा सकती है, वहीं भारत इस मामले में विफल रहा है। अब भारत यदि आर्थिक मोर्चे पर क्षेत्र में चीन की उपस्थिति का अंतर पाटना चाहता है, तो उसे अपनी कंपनियों को और ज्यादा सक्रियऔर खुला समर्थन देना होगा।

<u>Democratic values of India & Africa</u>

फिर भी अफ्रीका के साथ व्यवहार के मामले में भारत की अपनी ही ताकत है। इसकी लोकतांत्रिक परंपराएं अफ्रीका संबंधी मामलों पर सहयोग के लिए इसे चीन की तुलना में पश्चिम के लिए ज्यादाअनुकूल साथी के

रूप में पेश करने में सहायक हैं। तमाम देश भारत को अफ्रीका में एक बेहतर उत्पादक भागीदार के रूप में पाते हैं, क्योंकि भारतीय कंपनियों की अफ्रीकी समाज में ज्यादा स्वीकार्यताहै। ऐसे में, नई दिल्ली को अफ्रीका से रिश्ते मजबूत करने और महाद्वीप में अपनी उपस्थिति बेहतर बनाने के लिए अपनी इन्हीं ताकतों का इस्तेमाल करना होगा। राष्ट्रपति कोविंद का अफ्रीका दौरा न सिर्फ भारत की विदेश नीति के स्वरूप में निरंतरता के महत्व को

जी-20 समूह और विश्व व्यवस्था में विखंडन

Declining role of G20

एक विशिष्ट अंतरराष्ट्रीय मंच के तौर पर जी-20 की भूमिका एक ऐसी दुनिया में लगातार कम हो रही है जो भूमंडलीकरण के दुष्प्रभावों का सामना कर रही है।

- आर्थिक ठहराव, चौतरफा बेरोजगारी, बढ़ती असमानता और संघर्षपूर्ण इलाकों से बड़ी संख्या में लोगों के विस्थापन की वजह से इस दुनिया में राजनीतिक एवं सामाजिक तनाव की स्थिति देखी जा रही है।
- ऐसे में जी-20 सम्मेलन के आयोजक शहर हैम्बर्ग की सड़कों पर विरोध के नजारे भी देखने को मिले।
- इस विरोध का हिंसा और आगजनी के स्तर तक पहुंचना वैश्विक नेताओं के जमावड़े के खिलाफ उनके प्रतिपक्ष को बयां कर रहा था।

Globalisation and its charm and likewise charm of G20?

- बहरहाल भूमंडलीकरण अपनी चमक खो चुका है और जी-20 के नेता भी लोगों को यह आश्वस्त करने में नाकाम रहे कि यह संगठन विभिन्न देशों के समक्ष मौजूद चुनौतियों से निपट पाने का अब भी सबसे सशक्त मंच बना हुआ है?
- यह बहुराष्ट्रीय सम्मेलन मौजूदा विश्व की चुनौतियों से निपटने की दिशा में उठाए गए समन्वित कदमों के लिए सुर्खियों में नहीं आया।
- इसके स्थान पर सम्मेलन में पहुंचे कुछ शीर्ष नेताओं की एक-दूसरे के साथ हुई मुलाकातों ने इसे सुर्खियां दिलाईं। रूस के राष्ट्रपति व्लादीमिर पुतिन की अमेरिकी राष्ट्रपति डॉनल्ड ट्रंप के साथ हुई मुलाकात हो या ट्रंप की चीन के राष्ट्रपति शी चिनफिंग के साथ मुलाकात रही हो, उन्हें कहीं अधिक तवज्जो मिली।
- इसी तरह प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का सम्मेलन के दौरान ब्रिक्स नेताओं की एक बैठक में चिनफिंग से हाथ मिलाना भी यह उम्मीद जगा गया कि इससे भारत एवं चीन के बीच डोकलाम मुद्दे पर बना गतिरोध दूर करने में मदद मिलेगी।

G20 and global issues

- पुतिन और ट्रंप की यह पहली बैठक थी और करीब दो घंटे तक चली। इससे यह उम्मीद जगी कि ट्रंप के नेतृत्व में अमेरिका के साथ रूस के रिश्ते सकारात्मक दिशा में बढ़ेंगे। सीरिया में संघर्ष-विराम पर हुआ समझौता इस दिशा में उठाया गया उत्साहवद्र्धक कदम है। हालांकि अमेरिकी प्रशासन लगातार रूस के प्रति विरोधी रवैया अपनाए हुए है। रूस के चीन की तरफ कम झुकाव रखने से भू-राजनीति का पलड़ा हमारी तरफ झुक सकता है।
- लेकिन अगर ऐसा नहीं होता है तो रूस और चीन की जुगलबंदी और भी मजबूत होगी।
- जी-20 सम्मेलन में जाने के पहले चिनफिंग मॉस्को में थे जहां उन्होंने कहा कि रूस-चीन संबंध इतिहास के अपने सर्वश्रेष्ठ दौर से गुजर रहे हैं।

- रूस के साइबेरिया इलाके से प्राकृतिक गैस लाने वाली 'पावर ऑफ सर्बिया' पाइपलाइन के जरिये चीन को दिसंबर 2019 से गैस आपूर्ति किए जाने की घोषणा ने इस बयान पर एक तरह से मुहर लगा दी। इसके अलावा दूसरी 'पावर ऑफ सर्बिया' पाइपलाइन बिछाने पर भी दोनों देशों ने सहमति जताई है। रूस और चीन ने वन बेल्ट वन रोड अभियान के तहत कई परियोजनाओं के लिए 10अरब डॉलर का एक साझा निवेश कोष भी बनाने का ऐलान किया है। जापान के प्रधानमंत्री शिंजो आबे भी ब्रसेल्स में यूरोपीय संघ के साथ मुक्त व्यापार समझौता संपन्न करने के बाद हैम्बर्ग पहुंचे थे। इससे पता चलता है कि वैश्विक अर्थव्यवस्था और कारोबार में अमेरिका और ब्रिटेन (ब्रेक्सिट के बाद) किस हद तक पराये हो चुके हैं
- ट्रंप-चिनफिंग मुलाकात भी इस मायने में अहम थी कि अमेरिकी राष्ट्रपति की नजर में उत्तर कोरिया को काबू में रखने के लिए चीन पर्याप्त कदम नहीं उठा रहा है।
- अमेरिका की मिसाइल-रोधी सुरक्षा प्रणाली 'थाड' पहले ही दक्षिण कोरिया में तैनात की जा चुकी है लेकिन चिनफिंग और पुतिन दोनों ही इस पर गहरा एतराज जता चुके हैं। ट्रंप ने साफ कहा कि अगर चीन उत्तर कोरिया पर रोक लगा पाने में नाकाम रहा तो कोरिया के परमाणु एवं मिसाइल खतरे को दूर करने के लिए अमेरिका एकतरफा कार्रवाई कर सकता है।
- ट्रंप की इस घोषणा के तत्काल बाद दक्षिण कोरिया में तैनात अमेरिकी बमवर्षक विमान तैयारी करते हुए दिखे। पूरी संभावना है कि कोरियाई प्रायद्वीप में तनाव बढऩे की स्थिति में चीन-अमेरिका के रिश्तों में तीव्र गिरावट आ सकती है। उस स्थिति में डोकलाम पर बनी गरमागर्मी शांत हो सकती है। वैसे यह महज एक सुकूनदायक सोच भी साबित हो सकती है।

ऐसे मुद्दों के दबदबे वाले सम्मेलन में आखिर उसके घोषित एजेंडा को किस हद तक हासिल किया जा सका? वैश्विक नेताओं ने अन्य सम्मेलनों की तरह यहां भी **'सशक्त, संतुलित एवं समावेशी विकास'** के प्रति अपनी प्रतिबद्धता जताई लेकिन उसे हासिल कर पाना खासा मुश्किल नजर आ रहा है। मसलन, हैम्बर्ग कार्य योजना में यह स्वीकार किया गया है कि 2014 में ब्रिसबेन में हुए सम्मेलन के वर्ष 2018 तक दौरान वैश्विक सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में 2 फीसदी बढ़ोतरी का जो लक्ष्य घोषित किया गया था, उसे आर्थिक प्रगति एवं रोजगार संभावनाएं बढऩे के बावजूद हासिल कर पाना मुमकिन नहीं है। कमजोर उत्पादकता बढ़ोतरी, आय असमानता और बूढ़ी होती जनसंख्या के चलते लंबी अवधि में आर्थिक प्रगति में गिरावट का गंभीर खतरा बना हुआ है।

दुनिया के शीर्ष नेताओं ने प्रतिस्पद्र्धी अवमूल्यन की दिशा में आगे नहीं बढऩे के प्रति अपनी प्रतिबद्धता दोहरायी और विनिमय दरों में बदलाव से परहेज करने की भी बात कही। आम तौर पर हरेक जी-20 सम्मेलन में यह पक्ष दोहराया जाता रहा है और इस बार भी यही हुआ। हालांकि व्यापार और जलवायु परिवर्तन के मामले में यह संगठन पिछड़ता हुआ नजर आ रहा है। मसलन, लगातार कई सम्मेलनों से संरक्षणवाद से लडऩे की बात कही जाती रही है और वर्ष 2018 के अंत तक संरक्षणवादी तौर-तरीकों को खत्म करने का भी स्पष्ट जिक्र होता रहा है। लेकिन हैम्बर्ग सम्मेलन के बाद जारी विज्ञप्ति में इस घोषणा को दोहराया नहीं गया। इसके बजाय संरक्षणवाद के खिलाफ संघर्ष को यह कहते हुए कमतर किया गया है कि कारोबार सुरक्षा के वैध तरीकों की भूमिका को स्वीकार किया गया है। इसका मतलब है कि ट्रंप इस अहम मसले पर अपनी बात मनवाने में सफल रहे।

Climate change & Hamburg

जलवायु परिवर्तन के मुद्दे पर हैम्बर्ग कार्य योजना में यह स्वीकार किया गया है कि अमेरिका पेरिस समझौते से अलग हो रहा है लेकिन बाकी देश इस समझौते पर अमल के लिए प्रतिबद्ध हैं। यह पहला मौका है जब

किसी सम्मेलन में उभरे मतभेद के स्वरों को भी अंतिम वक्तव्य में अलग-अलग रेखांकित किया गया है। यह वैश्विक शासन ढांचे में उभर रहे विखंडन का एक और संकेत है। भारत इस बात से राहत महसूस कर सकता है कि आतंकवाद के खिलाफ उसके कड़े रवैये को अन्य देशों का भी समर्थन मिला और अंतिम ïवक्तव्य में भी उसे पूरी तवज्जो दी गई। हालांकि इसके अलावा किसी अन्य मोर्चे पर भारत को खास कामयाबी नहीं मिली।

विभिन्न देशों को घरेलू स्तर पर सुधारात्मक उपायों को लागू करने के मोर्चे पर हुई प्रगति का अगर आकलन किया जाए तो आश्चर्य होता है कि जीएसटी को भारत की महत्त्वपूर्ण आर्थिक उपलब्धि के तौर पर मान्यता क्यों नहीं दी गई? केवल कारोबारी सुगमता की दिशा में किए गए प्रयासों और वित्तीय बाजार सुधार के लिए किए गए कुछ वित्तीय उपायों पर अमल का ही सांकेतिक तौर पर जिक्र किया गया। जी-20 के कामकाज का बड़ा हिस्सा अब भी तकनीकी समूहों में संचालित होता है और मुख्य रूप से ओईसीडी सचिवालय से निर्देशित होता है। यह साफ नहीं है कि ओईसीडी देशों के लिए विकसित मानकों के भारत पर असर का सही तरह से आकलन हुआ है या नहीं। इससे यह भी साफ हो जाएगा कि क्या ओईसीडी के साथ भारत के निकट संपर्क का वक्त आ चुका है

भटक नहीं रहा है ब्रिक्स

A brief about BRICS

- ब्रिक्स वैश्विक शक्ति के रूप में उभरते देशों का एक मजबूत समूह है। यह दुनिया की एक बड़ी आबादी का प्रतिनिधित्व करता है, जो विकास की दौड़ में बेशक पीछे रह गई थी, मगर अब वैश्विक विकास के अगुआ की भूमिका निभा रही है।
- इस संगठन के पांच सदस्य देश हैं- भारत, चीन, दक्षिण अफ्रीका, ब्राजील और रूस।

Brics & Influence over world

- ये सभी बड़े व सक्रिय देश हैं और दुनिया भर की विकास प्रक्रिया में महत्वपूर्ण दखल रखते हैं। यह कहना गलत नहीं होगा कि इन देशों ने काफी हद तक पुराने आर्थिक नेतृत्व को बेदखल कर दिया है।
- ये आर्थिक मोर्चों पर काफी सक्रिय व सफल भी हो रहे हैं।
- ब्रिक्स ने न सिर्फ दूसरे विश्व युद्ध के बाद वैश्विक अर्थव्यवस्था को नियंत्रित करने वाली नियामक संस्थाओं को प्रभावित करना शुरू कर दिया है, बल्कि यह उनका विकल्प भी बनता जा रहा है।
- ब्रिक्स का गठन उन चंद प्रयासों में से एक है, जो अंतरराष्ट्रीय आथिक ढांचे को काफी नजदीक से समझने, उससे संतुलन साधने और बदलती जरूरतों के मुताबिक उसमें फेरबदल करने को लेकर किए गए हैं।
- करीब दस वर्ष पहले जब इसकी स्थापना की गई थी, तभी इसकी भूमिका एक आश्वस्तकारी संगठन की दिखी थी। इसमें शामिल होने वाले सदस्य देश विकास की तेज चाल चल रहे थे, जबकि दूसरे देश (जिनमें दुनिया भर की बड़ी व मजबूत अर्थव्यवस्थाएं शामिल थीं) सुस्त होते जा रहे थे। वैश्विक गति तय करने वाले देशों में से इन सदस्य देशों का चयन भविष्य की रूपरेखा बता रहा था। ये सदस्य देश पारंपरिक देशों से बिल्कुल अलग थे। यह लुभाने वाला नजरिया था। 21वीं सदी एशिया की सदी होने वाली थी, और वैश्विक अर्थव्यवस्था को फिर से आकार देने के एक ऐसे महत्वपूर्ण मंच के रूप में ब्रिक्स को देखा जाने लगा था, जो भविष्य में वैश्विक मसलों में एक नया संतुलन बनाएगा।

How far BRICS grouping Successful

यह नजरिया बना रहा और ब्रिक्स इस दिशा में सक्रिय भी है। इसकी बैठकें लगातार होती रही हैं, जिनमें शासनाध्यक्ष शामिल होते हैं। मगर परिणाम हर बार अपेक्षित नहीं रहा है। इसकी वजह यह भी है कि :

- सभी देश समान गति से आगे बढ़ने में असमर्थ हैं। जैसे दक्षिण अफ्रीका, ब्राजील और रूस की गति भारत व चीन से बिल्कुल अलग रही है, और डर यही है कि लंबी अवधि में यह इस गुट की एकजुटता पर प्रतिकूल असर डाल सकती है।
- इसी तरह, वैश्विक आर्थिक प्राथमिकताओं पर असर डालने वाला चीन का हालिया संकट और अप्रत्याशित मंदी के संकेत देते भारत के आर्थिक विकास के ताजा आंकड़े भी इसके सदस्य देशों पर व्यापक असर डाल सकते हैं। नतीजतन, ब्रिक्स की तस्वीर अनुमान से अधिक जटिल हो सकती है। फिर भी, उदार व खुली वैश्विक अर्थव्यवस्था की पैरोकारी करने वाला यह मंच अपनी राह से भटका नहीं है। यानी यह वाशिंगटन के 'अमेरिका फस्र्ट' (अमेरिका प्रथम) के नजरिये से बिल्कुल उलट है।

INDIA China Shadow over BRICS

श्यामन शहर में हुई ब्रिक्स की बैठक से पहले भारत और चीन के संबंधों में तेज गिरावट आई थी, जिसके केंद्र में डोका ला विवाद था। भारत-चीन और भूटान की संयुक्त सीमा पर स्थित डोका ला को लेकर भारत और चीन के तेवर न सिर्फ सख्त हो गए थे, बल्कि वहां दोनों देशों की सेनाओं की तैनाती भी हो गई थी। ऐसा ही कुछ करीब दो दशक पहले भी हुआ था, जब सुमदोरोंग चू में विवाद पैदा हुआ। वहां भी भारतीय व चीनी सैनिक एक-दूसरे के सामने आ गए थे और सैन्य टकराव का खतरा बढ़ गया था। लंबे समय तक गतिरोध बने रहने के बाद आखिरकार दोनों पक्ष अपनी-अपनी सेना को बैरक में लौटाने पर सहमत हुए। तब इस पर भी बात बनी थी कि दोनों पक्ष टकराव से बचेंगे, क्योंकि इससे हालात बिगड़ जाते हैं। अगर इसकी कुछ हद तक तुलना डोका ला से करें, तो इस बार मुश्किलों का सामना कहीं अधिक परिपक्वता व सकारात्मक नजरिये से किया गया। भारत की विदेश मंत्री ने कहा भी कि यह मसला कूटनीतिक नजरिये से ही सुलझेगा और आखिरकार एक खतरनाक हालात का संतोषजनक समाधान निकाल ही लिया गया। भले ही डोका ला विवाद का हल निकलना भारत की एक कूटनीतिक जीत मान लें, लेकिन मेरा मानना है कि इसे एक ऐसे संतुलित और बेहतर नतीजे के रूप में देखा जाना चाहिए, जिसने दोनों देशों के हितों को सुरक्षित किया और मजबूत द्विपक्षीय साझेदारी की संभावनाएं जगाईं।

Xiamen summit

श्यामन सम्मेलन से जुड़ा महत्वपूर्ण मसला वह घोषणापत्र है, जिसमें पहली बार पाकिस्तान की जमीन पर पनाह लेने वाले आतंकी संगठनों के नामों का उल्लेख है। इससे पहले ऐसे किसी दस्तावेज में इन जमातों का सीधा उल्लेख नहीं किया गया था।

- चीन की पहचान आमतौर पर ऐसे मुल्क की रही है, जो पाकिस्तान पर किसी तरह की प्रतिकूल कार्रवाई के पक्ष में नहीं होता। लिहाजा श्यामन घोषणापत्र में पाकिस्तान परस्त आतंकी संगठनों के नामों का उल्लेख चीन के रुख में आए महत्वपूर्ण बदलावों का संकेत है।
- आतंकवाद को शह देने की पाकिस्तान की भूमिका को लेकर भारत हमेशा से तमाम वैश्विक मंचों पर आवाज बुलंद करता रहा है और दबाव बनाता रहा है। सीमित ही सही, लेकिन चीन ने भी इस पर रजामंदी दी है, जिसका स्वागत किया जाना चाहिए। उम्मीद है कि चीन अब घोषणापत्र के अनुसार काम करेगा।

सवाल यह है कि चीन ने आखिर यह नरमी क्यों दिखाई है? इसका थाह लेना आसान नहीं है। मुमकिन है कि भारत की निरंतर वकालत ने उसे बाध्य किया हो। संभव है कि मेजबान देश होने की वजह से वह एकमात्र विरोधी स्वर नहीं बनना चाहता हो, और वह भी तब, जब अमेरिका जैसे देशों ने पाकिस्तान का खैरख्वाह बनने पर उसे बेपरदा किया है। वजह चाहे जो भी हो, ब्रिक्स सम्मेलन से संतुष्ट होने की भारत के पास पर्याप्त

वजहें हैं। भारत ने इस संगठन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है और इसे मजबूत बनाया है। इससे भी महत्वपूर्ण यह है कि इसने अपने कुछ खास पड़ोसियों के पूर्वाग्रहों को तोड़ा है।

HINDI OPTIONAL TEST SERIES SCHEDULE

टेस्ट संख्या	निर्धारित दिनांक	पाठ्यक्रम
1.	**1 जुलाई**	भाषा खंड {अपभ्रंश ,अवहट,प्रारभिक हिंदी ,देवनागरी लिपि ,अवधी,ब्रज,/टिप्पणी सहित|)
2.	**8 जुलाई**	कविता खंड (कबीर ,सुर ,तुलसी ,जायसी ,बिहारी ,गुप्त –व्याख्या सहित)
3.	**15 जुलाई**	भाषा खंड(खड़ी बोली,दक्खिनी हिंदी ,राजभाषा ,हिंदी का वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकास ,टिप्पणी सहित .
4.	**22 जुलाई**	कविता खंड (निराला ,प्रसाद ,अज्ञेय ,मुक्तिबोध,नागार्जुन ,दिनकर ,व्याख्या सहित |)
5.	**29 जुलाई**	गद्ध खंड (कहानी ,नाटक , उपन्यास ,निबंध एवं आलोचना का विकास ,गद्ध की अन्य विधाएं (संस्मरण,रिपोर्ताज आदि),{गोदान +मैला आँचल ,दिव्या महाभोज
6.	**5 अगस्त**	· (साहित्य इतिहास) आदिकाल ,भक्तिकाल ,रीतिकाल ,भारतेन्दुयुग ,द्विवेदी युग ,छायावाद आदि /टिप्पणी सहित)
7.	**12 अगस्त**	प्रगतिवाद ,प्रयोगवाद ,नई कविता ,समकालीन कविता ,नवगीत ,अकविता /टिप्पणी सहित)
8.	**19 अगस्त**	(समग्र जाँच परीक्षा) प्रश्न पत्र 1 + 2 ,टिप्पणी +व्याख्या
9.	**30 अगस्त**	(समग्र जाँच परीक्षा) प्रश्न पत्र 1 + 2 ,टिप्पणी +व्याख्या
10.	**9 सितम्बर**	(समग्र जाँच परीक्षा) प्रश्न पत्र 1 + 2 ,टिप्पणी +व्याख्या